# पाली-प्राकृत-व्याकरणम्



महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाददीक्षितेन
विरचितम्

प्रकाशक

मोतीलाल बनारसीदास
संस्कृत-हिन्दी पुस्तक-विक्रेता
पोस्टबक्स नं० ७५ काशी

प्रकाशकः—
मोतीलाल बनारसीदास
संस्कृत-हिन्दी पुस्तक-विक्रेता
पोस्टबक्स नं० ७५ काशी।



मुद्रकः—
काशीराज मुद्रणालय,
दुर्ग रामनगर,
( बनारस )

# संस्कृतानुरागियों के लिए अपूर्व अवसर

## महामहोपाध्याय मथुराप्रसाद दीक्षित

कृत

### संस्कृत साहित्य के अपूर्व ग्रन्थरत्न

भारत-विजय-नाटकम्—यह प्राचीन कवियों के सदृश नाटकीय नियमों का पालन करते हुए ऐतिहासिक तथा राजनीतिक नाटक बीसवी सदी में अपूर्व है। इसमे भारत मे अंग्रेजों के आगमन, उनके अन्याय से भारतव्यापार का नाश, अँगूठे काटना, वेगमों पर कोड़े लगाकर आभूषण उतारना, खजाना लूटना आदि दृश्यों का तथा कूटनीति से देशीराज्यों का अन्त करना आदि का अपूर्व रीति से दृश्य वर्णन है।

१८५७ का स्वातन्त्र्य युद्ध, झाँसी रानी की वीरता और अन्त में कांग्रेस के स्वातन्त्र्य युद्ध से पराजित होकर महात्मा गाँधी जी के हाथों में भारत को विभक्तकर शासन सौंप कर चले जाने का अपूर्व दृश्य है। इसके पढ़ते हुये किस भारतीय का हृदय शौर्य से ओत प्रोत न हो जायगा, एवं किसके हृदय में स्वदेश प्रेम की लहरें न उठने लगेंगी, विदेशियों के शासन से किस के मन में घृणा न हो जायगी।

इस रचना में सब से अधिक महत्त्व का विषय यह है कि दीक्षित जी ने अपनी अभूतपूर्व नीति-कुशलता से अंग्रेजों की गतिविधि समझकर आज से दश वर्ष पूर्व ही देश को विभक्त कर इनका यहाँ से १९४८ में प्रयाण करना जनता के सामने रख दिया था, १९४९ के कांग्रेस शिक्षामन्त्री के पत्र साथ में छपे हैं, दीक्षित जी की यह भविष्य-दर्शिता आज भी महर्षियों के अस्तित्व का ज्वलन्त प्रमाण है, अतः संस्कृतानुरागियों के लिये यह परमोपादेय है। अतएव इसके गुणों में आकृष्ट बोर्ड के विद्वानों ने उत्तरप्रदेश संस्कृत-प्रथमा में एवम् पञ्जाब संस्कृत-बोर्ड के विद्वानों ने प्राज्ञ-परीक्षा में इसे नियत कर दिया है। मूल्य २॥) हिन्दी अनुवादसहित

२—शङ्कर-विजय नाटक—इसमें मण्डनमिश्र का शास्त्रार्थ, मीमांसा, वेदान्त, जैन, बौद्ध, चार्वाक, कापालिक आदि दर्शनों का तात्त्विक वर्णन है जिससे प्रत्येक दर्शन का ठोस एवं पूर्ण परिज्ञान हो जाता है। मूल्य १) मात्र

३—भक्तसुदर्शन नाटक—यह देवी भागवत से ऐतिहासिक नाटक लिखा गया है। रामचन्द्र जी के पूर्वज सुदर्शन की भक्ति, तल्लीनता, 'दुर्गा' देवी के मन्त्र का प्रभाव, दुर्गादेवी का प्रगट होकर युद्ध में शत्रु को मारकर सुदर्शन—अयोध्या-

# भूमिका

सुर-सरस्वती की अपेक्षा प्राकृत की प्राचीनता अथवा अर्वाचीनता-संबन्धी विवाद से असंपृक्त रह कर हम यह दृढता पूर्वक कह सकते हैं कि समुच्चारण सौकर्य इसकी समुत्पत्ति का—समुन्नति का—प्रधान कारण है। एक श्रावक के प्रश्न के उत्तर में श्रीहरिभद्र सूरि जी महाराज का कथन है कि—

वाल-स्त्री-वृद्ध-मूर्खाणां नृणां चारित्रकांक्षिणाम्।
अनुग्रहार्थं तत्त्वज्ञैः सिद्धान्तः प्राकृतः कृतः॥

लोक-व्यवहार विषयक अनुभूति से भी उपर्य्युक्त सिद्धान्त का ही समर्थन होता है। अपठित परिवार के व्यक्ति, विशेषतः बालक और वृद्ध कुछ अक्षरों का उच्चारण सुगमता पूर्वक नहीं करते। उदाहरणार्थ उष्ट्र, हस्त, मस्तक, युधिष्ठिर आदि संयुक्ताक्षर समन्वित शब्दों का उच्चारण वह विकृत रूप में ही उट्ठ (ऊँट), हत्थ (हाथ), मत्थग (माथ) जुधिट्ठिल (युधिष्ठिर) आदि के रूप में ही कर सकेंगे। उन्हें इन शब्दों का परिज्ञान तो अवश्य है, पर शुद्ध रूप में उनके उच्चारण करने में वे पूर्णतया असमर्थ हैं। भिन्न भिन्न देशों में भी अक्षर-उच्चारण प्रणाली भिन्न भिन्न है। अतः यह निःसङ्कोच कहा जा सकता है कि प्रान्तीय अथवा देशीय भाषाओं की उत्पत्ति में इस उच्चारण का भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

पाली, प्राकृत आदि भाषाओं के विवेचक वैयाकरणों ने संस्कृत साहित्य के समान २ हजार धातुओं का परिगणन तथा प्रकृति और प्रत्यय का वैज्ञानिक विश्लेषण न करके केवल परिणमन (रूपान्तर पद्धति की प्रक्रिया प्रदर्शित की है, जिसके फल स्वरूप आज
का अध्ययन संस्कृत माध्यम से ही किया जाता है।
इस सूत्र के निर्देश से भी उन्होंने उपर्युक्त मत की ही

३ इदीतः पानीयादिषु ।
४ उदूतो मधूकादिषु ।
५ उत्सौन्दर्यादिषु ।
६ इत एत् पिण्डसमेषु ।
७ ऐत एत् ।
८ ए शय्यादिषु ।
९ औत ओत् ।
१० उत ओत्तुण्डसमेषु ।
११ ऋ रीति ।
१२ ष्टस्य ठः ।
ठस्य ढोऽपि वाच्यः ।
१३ स्तस्य थः ।
१४ स्पस्य फः ।
१५ र्तस्य टः ।
१६ न धूर्तादिषु ।
१७ दशादिषु हः ।
१८ संख्यायाश्च ( रः ) ।
१९ उत्तरीयातीययोर्यो ज्जो वा ।
२० चौर्यसमेषु रियः ।
२१ वक्रादिष्वनुस्वारः ।
२२ मांसादिषु वा ।
२३ नीडादिषु द्वित्वम् ।
२४ पौरादिष्व उत् ।
२५ अवर्णो यः श्रुतिः ।
२६ वसतिभरत्तयोर्हः ।
२७ प्रतिसरवेतसपताकासु डः ।
२८ इतेस्तः पदादेः ।
२९ इत्पुरुषे रोः ।
३० युक्ते ओत उत् आदीदूतां ह्रस्वश्च ।
३१ अत ओत्सोः ।
३२ स्त्रियामात् ।
३३ नपुंसके सोर्बिन्दुः ।
३४ अन्त्यस्य हलो लुपिः ।
३५ सुभिसुप्सु दीर्घः ।
३६ क्त्वा तूण इयौ ।

इति म० म० मथुराप्रसादकृते पा० प्रा० व्याकरणे द्वितीयोऽध्यायः ।

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।



# पालीप्राकृत-व्याकरणम्

यत्त्वत्पादसरोरुहेण जयितां स्वान्ते प्रबालोऽदधान्
मन्ये तन्नितरामसौ जड़( ल )मतिर्बालः प्रकृष्टो भृशम् ।
यन्नीत्वा लघुपल्लवः पदलवं साम्याय संकल्पते
क्षुद्रोऽसो लवमात्रतो न समता नैतद्यतो बुध्यते ॥१॥

बौद्ध-जैनागमान्दृष्ट्वा तेषां व्याकरणान्यपि ।
पाली-प्राकृत-बोधाय लघुव्याकरणं ब्रुवे ॥ २ ॥

धात्वादेशनिपातानां तथा सुप्तिङ्विधेरपि ।
वाक्यैकदेशयातत्वात्सुज्ञत्वान्नैव दर्शये ॥ ३ ॥

**क-ग-च-ज-त-द-प-य-वां प्रायो लोपः ॥१॥ १ ॥** एषां प्रायो लोपः स्यात् (कस्य) वउलो। वराई। गोउलं। चोरओ। तारिआ। मासिअं। रसिओ। सअलो। संवाहओ। हंसओ। (गस्य) साअरो। उरओ। छाओ। जाअरा। पराओ। रोओ। (चस्य) सुइरं।

---

हिन्दी। समस्तबौद्धागम और जैनागमों को एवम् उनके व्याकरणों को अर्थात् पाली व्याकरण तथा प्राकृत व्याकरणों को देखकर पाली और प्राकृत के बोध के लिये संक्षिप्त और सरल "पाली-प्राकृत-व्याकरण" को कहता हूं। धातु के स्थान में जायमान आदेश, निपात और सुप्तिङ्विधि, को नहीं कहूंगा क्योंकि स्वयं इन की प्रतीति हो जाती है।

कगेति। क-ग-च-ज-त-द-प-य-व-इनका प्रायः लोप होता है। प्रायः पद के ग्रहण से कहीं २ नहीं भी होता है। लक्ष्यानुसार व्यवस्था करनी चाहिये, यदि दो वर्णों का लोप प्राप्त हो तो सुखद प्रतीयमान होने से उत्तर वर्ण का लोप होगा।

अनादावेवेति वाच्यम् । तेनेह न । कालो, दासो, पुराणं ।

**अधो मनयाम् ।१।२।** वर्णान्तरस्य अधः स्थितानां मकार-नकार-यकाराणां लोपः स्यात् । छद्मं । रस्सी । तिग्गं । (नस्य) लग्गो । भग्गो । मग्गो । भुग्गो । ( यस्य ) मन्ना । वन्ना । तुल्लो ।

---

यह ककारादिकों के लोप करने पर यदि अकार अथवा आकार होगा तो उसको वक्ष्यमाण "अवर्णो यः श्रुतिः" इस ( २+२५ ) सूत्र से यकार हो जायगा । परन्तु यह यकार आदेश मागधी, अर्धमागधी मे होगा, क्योंकि जैनागमों में प्रायः यकार का प्रयोग मिलता है, परन्तु नाटक में नहीं । मेरे मत से सौकर्य-प्रतीति से नाटकों में भी करना चाहिए । प्राचीन कालिक नाटकों मे शौरसेनी का प्राधान्य है अतः स्त्री आदि की उक्ति मे अकार को यकारादेश नहीं है । परन्तु जैनागमों मे प्रायः यकार ही है । जैसे—भगवती सूत्रागम—

"वियसिय अरविन्दकरा णासियतिमिरा सुहासिया देवी ।
मज्झं पि देउ मेहं बुह-विबुह-णमंसिया णिच्चं ।

यहां विकसित, नासित, सुखासिता, नमंसितादिक शब्दों मे ककार तकार के लोप के अनन्तर अवशिष्ट अकार को यकार होता है । एवम् । "चम्पाणाम णयरी होत्था" यहां भी 'नगरी' शब्द के गकार लोप के अनन्तर अवशिष्ट 'अ' को 'य' होता है । दश वैकालिक जैनागम-गोचरीप्रकरण—ण य पुप्फं किलामेइ सो य पीणाइ अप्पयं । यहां-न च, स च, आत्मकम्, मे चकार, ककार लोप के अनन्तर यकार होता है ।

अध इति-संयुक्त वर्ण के अधोभाग मे स्थित मकार-नकार-यकार का लोप हो । जैसे-छद्मम्, रश्मिः, तिग्मम् । कोई आचार्य—"क्वचिदन्यत्रापि" ( २८ ) इस अट्ठाइसवे सूत्र से वर्णविश्लेष और तत्स्वरयुक्तता करके जाल्म का जालम, विक्लवः का विपलवो, शुक्लः का सुकलो, सूक्ष्म का सूछम इत्यादि मानते हैं । परन्तु प्राकृतमहाकाव्यादिकों मे ऐसे प्रयोग नहीं मिलते । आधुनिक प्रचलित भाषा के परिज्ञान के लिए यह प्रकार माना जा सकता है । अस्तु ।

नकार के—लग्नः, भग्नः, मग्नः, भुग्नः, इत्यादि मे अधःस्थित नकार का लोप होता है । यकार के—मन्या, वन्या, तुल्यः इत्यादिकों मे यकार का लोप होता है ।

**शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ ।१।४।** लोपादवशिष्टस्य शेषरूपस्य, आदेशरूपस्य च वर्णस्य द्वित्वं स्यात् न त्वादौ। शेषस्य–धम्मो सप्पो। विप्पो। लग्गो। मग्गो। उक्का। विप्पओ। आदेशस्य यथा-पच्छिमो। वच्छो। उच्छाहो। लिच्छा। जुगुच्छा। अनादाविति किम्। चवणो, धओ। आदेशस्य थवओ, झाणं, खीणो। इत्यादि। संयुक्तस्यैव आदेशे द्वित्वम्। उत्तरीयानीययोर्यो ज्जो वा' इत्यत्र द्वित्वजकारविधानाज् ज्ञापकात्तेन

---

शेषा इति। लोप से अवशिष्ट वर्ण को तथा आदेश से जायमान वर्ण को द्वित्व हो। आदि मे स्थित शेष वर्ण को तथा आदिस्थित आदेशज वर्ण को द्वित्व नहीं हो। शेष वर्ण के उदाहरण—धर्मः, सर्पः, विप्रः। लग्नः, मग्नः, उल्का, विप्लवः, इत्यादि में पूर्वोक्त 'सर्वत्र लवराम्' इससे रेफ लकार के लोप करने के अनन्तर अवशिष्ट वर्णों को द्वित्व हुआ। आदेश के उदाहरण-पश्चिमः, वत्सः, उत्साहः, लिप्सा, जुगुप्सा, इत्यादिकों में 'श्चत्सप्सां छः ।२३।' इस वक्ष्यमाण सूत्र से छकार करने के अनन्तर आदेशभूत छकार को द्वित्व हो जायगा, फिर 'वर्गेषु युजः पूर्वः'। ७। इससे पूर्व छकार को चकार। यह लोप द्वित्वादि पाली प्राकृत मे समान है, परन्तु 'कगचज०' इस प्रथम सूत्र से जो लोप होता है, वह पाली मे कहीं नहीं होता है। जहां आदि में शेष या आदेश वर्ण होगा वहाँ द्वित्व नहीं होगा, जैसे—च्यवनः, ध्वजः। यकार वकार लोप करने अनन्तर चकार-धकार को द्वित्व नहीं होगा। आदेश के—स्तवकः, ध्यानम्, क्षीणम्' यहां, 'स्त' को थकार, 'ध्य' को झकार, 'क्ष' को खकार करने के अनन्तर द्वित्व नहीं होगा, क्योंकि आदि मे ये आदेशज वर्ण हैं।

यह आदेश जहां संयुक्त वर्ण के स्थान मे कोई वर्ण हुआ होगा वहीं द्वित्व होगा, क्योंकि 'उत्तरीयानीययोर्यो ज्जो वा'। इस सूत्र मे द्वित्व 'ज्ज' के विधान से जानते हैं कि संयुक्त वर्ण के आदेश मे ही द्वित्व होगा। अन्यथा केवल जकार विधान करते और फिर इससे द्वित्व हो जाता। फल—हरिद्रादि मे र को लकार

---

नोट—(१) स्तस्य थः। ३+१३। (२) ध्यह्ययोर्झः। २२। (३) ष्कस्कक्षां खः। १६।

णत्वं भवत्येव। उण्णग्रं, अण्णं, कण्णा। तुण्णवाओ, सण्णद्धं, पण्णओ।

**वर्गेषु युजः पूर्वः ।१।७।** कवर्गादिषु वर्गेषु युजः—द्वितीयचतुर्थयोः पूर्वः प्रथमतृतीयः स्यात्। कचटतपाः पञ्च वर्गाः। तत्र क ख ग घ ङाः, इति पञ्च कवर्गे। एवं चवर्गादिष्वपि पञ्च २ बोध्याः। तद्यथा। मुक्खो, वग्घो, मुच्छिओ, गुणड्ढो, (१) पत्थिओ, अद्धओ, गुज्झो, अब्भासो। आदेशे-पूर्वोक्ता एव। पच्छिमो, वच्छो, उच्छाहो, लिच्छा, जुगुच्छा। एवमन्यत्रापि। णक्खत्त। पक्खेओ, पक्खमूलं, णिक्खेवो,

---

णानुकूला, तथा व्यवहृत आगमोक्तशब्दानुकूल कल्पना कर लेना।

वर्णान्तरेणेति, यह नकार को णकार दूसरे वर्ण से संयुक्त होने पर नहीं होगा, जैसे—अन्तरा, कन्दरा, बन्धुरा, कन्दुकः, चन्दनम्, छन्दः, मन्दिरं, मन्दुरा,स्व से युक्त होने पर, अर्थात् नकार का नकार से योग होने पर णकार हो जायगा। जैसे—उन्नतम्, अन्यत्, कन्या, तुन्नवायः, सन्नद्धम्, पन्नगः। वर्गेष्विति—कवर्गादिक वर्गों में युक्त वर्ण का अर्थात् द्वितीय एवं चतुर्थ वर्ण का स्व से योग होने पर पूर्व वर्ण होगा, तात्पर्य यह कि ख-ख का योग होने पर क होगा, जैसे मूर्ख शब्द में रेफ लोप होने पर अवशिष्ट ख को द्वित्व, फिर युक्त 'ख' का पूर्व वर्ण ककार हो जायगा। एवं घ का पूर्व वर्ण 'ग' होगा, एवं 'छ' का च, 'ढ' का ड। 'थ' का 'त', 'ध' का 'द', इसी तरह सर्वत्र जानना। जैसे—मूर्खः मे क, व्याघ्रः, रेफ लोप, घकार द्वित्व। 'घ' को ग। मूर्छितः, छद्वित्व, छको चकार एवम् गुणाढ्यः, पार्थिवः, अध्वगः, गुल्फः, अभ्यासः। आदेश मे पूर्वोक्त उदाहरणों को ही जानना। पश्चिमः, वत्सः, उत्साहः, लिप्सा, जुगुप्सा,। इसी प्रकार अन्य आदेशों में भी जानना। नक्षत्रं, प्रक्षेपः, पक्षमूलं, निक्षेपः, राक्षसः, शुष्कम्, पुष्करः, रुष्टः, तुष्टः, परिभ्रष्टः, विस्वस्तः, प्रस्थितः,। इत्यादिकों में, नं० (४+

---

नोट—तुन्नवायस्तु सौचिकः। अमरः। अधो मनयाम् २। सर्वत्र लवराम् ३। अत्सप्सां छः ।१।२३। ष्कस्कक्षां खः ।१।१६। ष्टस्य ठः ।१३। स्तस्य थः ।२।१२। पूर्वः इत्यावृत्य पूर्वः पूर्वः स्यादित्यर्थः, तेन प्रथमस्य ककारादयः, न तूत्तरस्य

परिहा, णहरो, मुहरो, सही, सेहरो, महो, साहा, णहो। (घस्य) मेहो णिदाहो, जहणं, अहं, जिहस्सू। दुहणो, परिहो, णिहसो, अमोहो, सरहा, अवहणो। इत्यादि। थकारस्य—सवहो, कहा, मिहुणो, मिहिला, महिओ, रहगुत्ति, तिही, तहागओ, सारही। धकारस्य—रुहिरो, गोहिआ, गोहा, विहुवणं, णिहाणं, महुरो, णिही, साहू, सेवही, विहू, दही, अगाहं, जलहरो, महू। भकारस्य—णहो, सोहा, विहावरी, अहिल-सिओ, अहिलासा, अहीरो, गदहो, डिंडुहो, पहूओ, पहाविओ, सुहं, विहवो। इत्यादिः—

नानुस्वारात्संयोगाच्चेति वाच्यम्। अनुस्वारात्परेषामेषां न हकारः। संखो, लंघणं, मंथरा, बंधुरो, किंफलो, कुंभो। णिग्घिणो, णिक्खेपो। मण्डूकप्लुत्या प्रायः पदानुवृत्तेः आदौ तु क्वचिदपि न। खग्गो, खुरो, खइरो,

---

मेखला, परिखा, नखरः, मुखरः, सखी, शेखरः, मखः, शाखा, नखः। (घकार) के मेघः, निदाघः, जघनम्, अघम्, जिघत्सुः, द्रुघणः, (२) परिघः, निघसः, अमोघः, सरघा, अपघनः,। थकार के—शपथः। कथा, मिथुनः, मिथिला, मथितः, रथगुप्तिः, तिथिः, तथागतः, सारथिः, धकार के उदाहरण-रुधिरः, गोधिका, गोधा, १ विधुवनम्, निधानम्, मधुरः, निधिः, साधुः, सेवधिः, विधुः, दधि, अगाधम्, जलधरः, मधु। भकार के उदाहरण—नभः, शोभा, विभावरी, अभिलषितः, अभिलाषा, आभीरः, गर्दभः, डुण्डुभः, प्रभूतः, प्रभावितः, शुभम्, विभवः, इत्यादिकों मे तत् तत् वर्ण को हकार हुआ है। यह इन वर्णों को हकारादेश 'पाली' मे नहीं होता है।

नानुस्वारादिति। अनुस्वार से और संयोग से परे इनको हकारादेश नहीं होता है, जैसे-शंखः, लङ्घनम्, मन्थरा, बन्धुरः, किंफलः, कुम्भः। निर्घृणः, निक्षेपः। 'कगचज' सूत्रोक्त।१।१। प्रायः पदकी मण्डूकप्लुति से अनुवृत्ति करके यह मानना कि आदि मे विद्यमान खकारादिकों को हकार कहीं नहीं होगा, औ अनादि मे भी कहीं २ नहीं होगा। आदि मे जैसे—खड्गः, खुरः, खदिरः, खल

---

नोट—१।८। आदेशात्पूर्वमेव सकारस्यैव लोपे सर्वप्रयोगसिद्धौ पुस्तकान्तरे शक रो नेति बोध्यम्। द्रुघण—मुद्गर। २ परिघ—अस्त्रविशेष। निघस-निगलकर खाने

परिहा, णहरो, मुहरो, सही, सेहरो, महो, साहा, णहो। (घस्य) मेहो णिदाहो, जहणं, अहं, जिहस्सू। दुहणो, परिहो, णिहसो, अमोहो, सरहा, अवहणो। इत्यादि। थकारस्य–सवहो, कहा, मिहुणो, मिहिला, महिओ, रहगुत्ति, तिही, तहागओ, सारही। धकारस्य–रुहिरो, गोहिआ, गोहा, विहुवणं, णिहाणं, महुरो, णिही, साहू, सेवही, विहू, दही, अगाहं, जलहरो, महू। भकारस्य–णहो, सोहा, विहावरी, अहिलसिओ, अहिलासा, अहीरो, गद्दहो, डिंडुहो, पहूओ, पहाविओ, सुहं, विहवो। इत्यादिः—

नानुस्वारात्संयोगाच्चेति वाच्यम्। अनुस्वारात्परेषामेषां न हकारः। संखो, लंघणं, मंथरा, बंधुरो, किंफलो, कुंभो। णिग्घिणो, णिक्खेपो। मण्डूकप्लुत्या प्रायः पदानुवृत्तेः आदौ तु क्वचिदपि न। खग्गो, खुरो, खइरो,

---

मेखला, परिखा, नखरः, मुखरः, सखी, शेखरः, मखः, शाखा, नखः। (घकार) के मेघः, निदाघः, जघनम्, अघम्, जिघत्सुः, द्रुघणः, (२) परिघः, निघसः, अमोघः, सरघा, अपघनः,। थकार के—शपथः। कथा, मिथुनः, मिथिला, मथितः, रथगुप्तिः, तिथिः, तथागतः, सारथिः, धकार के उदाहरण-रुधिरः, गोधिका, गोधा, १ विधुवनम्, निधानम्, मधुरः, निधिः, साधुः, सेवधिः, विधुः, दधि, अगाधम्, जलधरः, मधु। भकार के उदाहरण—नभः, शोभा, विभावरी, अभिलषितः, अभिलाषा, आभीरः, गर्दभः, डुण्डुभः, प्रभूतः, प्रभावितः, शुभम्, विभवः, इत्यादिकों मे तत् तत् वर्णों को हकार हुआ है। यह इन वर्णों को हकारादेश 'पाली' मे नहीं होता है।

नानुस्वारादिति। अनुस्वार से और संयोग से परे इनको हकारादेश नहीं होता है, जैसे-शंखः, लङ्घनम्, मन्थरा, बन्धुरः, किंफलः, कुम्भः। निर्घृणः, निक्षेपः। 'कगचज' सूत्रोक्त।१।१। प्रायः पदकी मण्डूकप्लुति से अनुवृत्ति करके यह मानना कि आदि मे विद्यमान खकारादिकों को हकार कहीं नहीं होगा, और अनादि मे भी कहीं २ नहीं होगा। आदि मे जैसे—खड्गः, खुरः, खदिरः, खलः

---

नोट—१।८।आदेशात्पूर्वमेव सकारस्यैव लोपे सर्वप्रयोगसिद्धौ पुस्तकान्तरे प्रा– रो नेति बोध्यम्। द्रुघण—मुद्गर। २ परिघ—अस्त्रविशेष। निघस-निगलकर ९

स्कन्धमो। सुक्खं, पुक्खरो, रुट्ठो, तुट्ठो, परिब्भट्ठो, बीसत्थो, पत्थिओ, एवमादेशान्तरेष्वप्यूह्यम्।

**उपरि लोपः क ग ड त द प ष ( १ ) श साम्। १। ८।** उपरिस्थितानामेषां लोपः स्यात्। भत्तं, भुत्तं, सित्थं, विवित्तं, रित्तं। सित्थअं, ( गस्य ) दुद्धं, मुद्धो, जद्धं, संदिद्धं, सिणिद्धो ( डस्य ) खग्गो, छग्गुणो, विग्गहिलो, रुज्जओ, छद्धा। ( तस्य ) उप्फुल्लं, उप्पलं उप्पाओ, तप्पिआ, उप्पण्णो, ( दस्य ) मुग्गरो, मुग्गलो। पग्गओ, ( पस्य ) सुत्तो, गुत्तं, लुत्तो, लित्तं, छुत्तं। ( षस्य ) सुक्कं, दुक्कला, चउक्कं, विक्कंभो, विट्ठा। मुक्को। ( शस्य ) णिच्छिद्दो। णिच्छंदो ( सस्य ) खलिअं, णेहः। अप्फालिअं। कत्तूरी, थविरो, थूणा, थूलो, थिरो, फुरणा, फुरिअं। ष्कस्य स्कष्कखामिति खकारोऽपि।

**खघथधभां हः। १। ९।** एषां हकारः स्यात्। (खस्य) मुहं, मेहला,

---

३ + २३ + १६ + ) नं० ( ३अ० १२ + १३ + ) से आदेश होने पर द्वित्व पूर्ववर्ण होगा।

उपरीति। किसी व्यञ्जन वर्ण के ऊपर मे विद्यमान क-ग-ड-त-द-प-ष-श-स इनका लोप हो। उदाहरण—(ककार) भक्तम्, भुक्तम्, सिक्थम्, विविक्तम्, रिक्तम्, सिक्थकम्। ( गकार ) दुग्धम्, मुग्धः, जग्धम्, संदिग्धम्, स्निग्धम्, ( डकार ) खड्गः, षड्गुणः, विड्ग्रहिलः, रुड्जयः, षड्धा। ( तकार ) उत्फुल्लम्, उत्पलम्, उत्पातः, तत्पिता। ( दकार ) मुद्गरः, मुद्गलः, पद्गतः। (पकार) सुप्तः, गुप्तः, लुप्तः, लिप्तम्, क्षुप्तम्। ( षकार ) शुष्कम्, दुष्कला, चतुष्कम्, विष्कम्भः, विष्ठा, मुष्कः। ( शकार ) निश्छिद्रः, निश्छन्दः। ( सकार ) स्खलितम्, स्नेहः, आस्फालितम्, कस्तूरी, स्थविरः, स्थूणा, स्थूलो, स्थिरः, स्फुरणा, स्फुरितम्' इत्यादिकों मे ककारादिकों के लोप होने पर शेष वर्ण को द्वित्व और द्वितीय को प्रथम, चतुर्थ को तृतीय होगा। परन्तु थविर, थूणा, थिरो, इत्यादि मे आदिभूत को द्वित्व नहीं होगा। यह लोप, द्वित्व, पूर्ववर्ण होना पालीप्राकृत मे समान है।

खघेति। ख-घ-थ-ध-भ-इन को हकार हो। ख के उदाहरण—मुखम्,

परिहा, णहरो, मुहरो, सही, सेहरो, महो, साहा, णहो। (घस्य) मेहो णिदाहो, जहणं, अहं, जिहत्सू। दुहणो, परिहो, णिहसो, अमोहो, सरहा, अवहणो। इत्यादि। थकारस्य–सवहो, कहा, मिहुणो, मिहिला, महिओ, रहगुत्ति, तिही, तहागओ, सारही। धकारस्य–रुहिरो, गोहिआ, गोहा, विहुवणं, णिहाणं, महुरो, णिही, साहू, सेवही, विहू, दही, अगाहं, जलहरो, महू। भकारस्य—णहो, सोहा, विहावरी, अहिलसिओ, अहिलासा, अहीरो, गद्दहो, डिंडुहो, पहूओ, पहाविओ, सुहं, विहवो। इत्यादिः—

नानुस्वारात्संयोगाच्चेति वाच्यम्। अनुस्वारात्परेषामेषां न हकारः। संखो, लंघणं, मंथरा, बंधुरो, किंफलो, कुंभो। णिग्घिणो, णिक्खेपो। मण्डूकप्लुत्या प्रायः पदानुवृत्तेः आदौ तु क्वचिदपि न। खग्गो, खुरो, खइरो,

---

मेखला, परिखा, नखरः, मुखरः, सखी, शेखरः, मखः, शाखा, नखः। (घकार) के मेघः, निदाघः, जघनम्, अघम्, जिघत्सुः, द्रुघणः, (२) परिघः, निघसः, अमोघः, सरघा, अपघनः,। थकार के—शपथः। कथा, मिथुनः, मिथिला, मथितः, रथगुप्तिः, तिथिः, तथागतः, सारथिः, धकार के उदाहरण-रुधिरः, गोधिका, गोधा, १ विधुवनम्, निधानम्, मधुरः, निधिः, साधुः, सेवधिः, विधुः, दधि, अगाधम्, जलधरः, मधु। भकार के उदाहरण—नभः, शोभा, विभावरी, अभिलषितः, अभिलाषा, आभीरः, गर्दभः, डुण्डुभः, प्रभूतः, प्रभावितः, शुभम्, विभवः, इत्यादिकों मे तत् तत् वर्ण को हकार हुआ है। यह इन वर्णों को हकारादेश 'पाली' मे नहीं होता है।

नानुस्वारादिति। अनुस्वार से और संयोग से परे इनको हकारादेश नहीं होता है, जैसे-शंखः, लङ्घनम्, मन्थरा, बन्धुरः, किंफलः, कुम्भः। निर्घृणः, निक्षेपः। 'कगचज' सूत्रोक्त।१।१। प्रायः पदकी मण्डूकप्लुति से अनुवृत्ति करके यह मानना कि आदि मे विद्यमान खकारादिकों को हकार कहीं नहीं होगा, और अनादि मे भी कहीं २ नहीं होगा। आदि मे जैसे—खड्गः, खुरः, खदिरः, खल

---

नोट—१।८।आदेशात्पूर्वमेव सकारस्यैव लोपे सर्वप्रयोगसिद्धौ पुस्तकान्तरे शकारो नेति बोध्यम्। द्रुघण—मुद्गर। २ परिघ—अस्त्रविशेष। निघस-निगलकर खाने

खलो। घड़ो, घणो, थिरो, थविरो। धीरो, धम्मो, धणिओ। भाणू, भालो। भीसणो। अनादावपि क्वचिन्न। अधमो, अभओ। इत्यादि। सुखोच्चारणानुकूलाद् व्यवस्था कार्या।

**अदातो यथादिषु वा। १। १०।** यथादिशब्देषु आदौ अनादौ वा वर्तमानस्य आतः अत् वा स्यात्। जह, जहा। तह, तहा,। पवहो, पवाहो। पहरो, पहारो। पअअं, पाअअं। परिआओ, पारिआओ। चमरं, चामरं। उक्खओ, उक्खाओ। हलिओ, हालिओ। 'वाग्रहणस्य व्यवस्थितविभापितत्वात् क्वचिन्नित्यम्। ठविओ' इत्यादि। युक्तेऽनुस्वारे च नित्यमिति वक्तव्यम्। संयुक्ते वर्णे परतोऽनुस्वारे च पूर्वस्य नित्यं

---

घटः, घनः, स्थिरः, स्थविरः, धीरः, धर्म्मः, धनिकः, भानुः, भालः, भीषणः,। इत्यादि मे हकार नहीं हुआ, कहीं अन्यत्र अनादि मे जैसे—अखण्डः, अधमः, अभयः इत्यादि। यहां भी समास से पूर्व में आदि ही है।

अदातो इति। यथादिक शब्दों के आदि अथवा अनादि मे विद्यमान आकार को अकार विकल्प से हो, जैसे–यथा–(नं० १।२०) से यकार को जकार उक्त सूत्र से हकार, विकल्प से इससे अकार होने पर। जह, जहा। एवं तथा के तह, तहा रूप होंगे। प्रवाहः, प्रहारः, प्राकृतं, प्रस्तारः ( २।१३ ) से स्त को थकार, अन्य कार्य पूर्वोक्त सूत्रों से जानना। पारिजातः, चामरम्। उत्खातः, 'यद्यपि अनुपदोक्त—( पास मे पूर्वोक्त ) सूत्रों से बहुलांश मे प्रयोग सिद्ध होते हैं, फिर भी सुखावबोधार्थ साधुत्व दिखायेंगे। नं०। ८ से तलोप। ४ से द्वित्व, ७ से ककार। १ से तलोप। एवम्, हालिकः। सूत्रोक्त वा ग्रहण व्यवस्थित विकल्पार्थक है, तो कहीं नित्य ह्रस्व होगा, जैसे ठविओ। स्थापितः। स्थ को ठ आदेश। नं० १५ से 'प' को व। १ से 'त' लोप। नित्य ह्रस्व। ठविओ।

संयुक्त वर्ण परे रहते, और अनुस्वार के योग मे नित्य ह्रस्व हो। प्रासः,

---

नोट—'कोटिरस्याद्नी गोधा, तले ज्याघातवारणे' अमरः। किंफलः—'काफल' इति शिमला प्रान्ते। नं० २० आदेर्यो जः नं० १२ ऋतोत् से अकार 'क'। 'कगचज' से लोप, परन्तु 'उदृत्वादिषु से उकार करके 'पाउड' मानते हैं। २ + १२ स्तस्य थः।

ह्रस्वः स्यात् । पत्तो, पुव्वो, पुव्वण्हो, अवरण्हो, बम्हणो, कज्जो, गुणड्ढो, धुत्तो, अस्समो, इस्सरो, उवज्झाओ, मुल्लं, रक्खसो, ऊम्मिआ, रत्ती, चुण्णं, तिव्वो, बम्हीलिवी, इत्यादि । अनुस्वारे—कंतो, कंचणं, लंछणं, लंगूलं, मंसो, पंसू, संजत्तिओ, संसइओ । इत्यादि (२+३०) सूत्रेण ह्रस्वे सिद्धे सुखावबोधार्थं युक्तग्रहणम्

सन्धावचामज्लोपविशेषा बहुलम् ।१।११। सन्धौ कर्तव्ये अचां स्थाने अज्विशेषा, लोपविशेषाश्च स्युः । बहुलग्रहणादन्यच्च स्यात् । वासेसी

---

पूर्वः, पूर्वाह्णः । अपराह्णः । नं० २६ से ह्ण को ण्ह । उभयत्र नित्य ह्रस्व ।ब्राह्मणः । नं० ३० से म्ह आदेश, नित्य ह्रस्व । कार्यः । नं० २१ से जकार । आदेशस्वरूप होने से द्वित्व । संयुक्ताक्षर परे है अतः नित्य ह्रस्व । धूर्तः, आश्रमः, ईश्वरः ! उपाध्यायः । नं० २२ से 'ध्य' को झ आदेश, द्वित्व, जकार, नित्य ह्रस्व । उवज्झाओ । मूल्यम् । राक्षसः । नं० १६ से क्ष को ख । ४ से द्वित्व । ७ से ककार । संयुक्त पर होने से नित्य ह्रस्व । रक्खसो । ऊर्मिका । रात्रिः । चूर्णम् । तीव्रः । ब्राह्मीलिपिः । नं० ३० से ह्म को म्ह । संयुक्त पर होने से नित्य ह्रस्व । नं० १५ से 'प' को 'व' । बम्हीलिवी । अन्य कार्य पूर्ववत् । अनुस्वार मे—कांतः, कांचनं, लांछनम्, लाङ्गूलम्, नित्य पर सवर्ण होने से संयुक्त परत्व है, परन्तु प्राकृत मे अनुस्वार होगा । अथवा–मांसः, पांशुः, सांयात्रिकः, सांशयिकः । इत्यादिक मे अनुस्वार परक होने से ह्रस्व हुआ ।

सन्धाविति । अचों की परस्पर सन्धिकर्तव्य रहते अच् के स्थान मे कहीं अज् विशेष कहीं लोप, कहीं द्वितीय अच् के विना, व्यञ्जन से योग होने पर भी

---

नोट ( ८ ) उपरि लोपः क ग ड त द प ष श साम् । ( ४ ) शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ । ( १ ) क ग च ज त द ० ( १५ ) पो वः । ( २६ ) ह्नश्नष्ण-स्ण स्नां ण्हः । ( ३० ) । ह्न ह्म ह्लेषु नलमां स्थितिरूर्ध्वम् । ( २१ ) यशय्याऽभिमन्युषु जः । ( २२ ) ध्यह्ययोर्झः । ( १६ ) ष्कस्कक्षां खः ( ७ ) वर्गेषु युजः पूर्वः ॥

वासइसी । राएसी, राअइसी । कएणोरो, कएणऊरो । कुंभारो, कुम्भआरो । अन्धारो, अन्धआरो । तववि, तवावि । ममवि, ममावि । केणवि, केणावि । राउलं, राअउलं । तुहद्धं, तुहअद्धं । महद्धं, मह-अद्धं । पापडणं, पाअपडअं । गंगोदगं, गंगाउदगं । क्वचिद्दीर्घविकल्पोऽपि बाहुलकादवसीयते” वारीमई, वारिमई । वईमूलं, वइमूलं । वेणू-वणं, वेणुवणं । केलीकला, केलिकला । तरीपवाहो, तरिपवाहो । थुई वाओ, थुइवाओ । गिरीगमणं, गिरिगमणं । भाणूरोहो, भाणुरोहो । साणूगओ, साणुगओ । साहूसमागमो, साहुसमागमो । क्वचिद् विकल्पेन ह्रस्वोऽपि । जउणतडं, जउणातडं । णइसोतो, णईसोतो । वहुमुहं, वहूमुहं । लालपडणं, लालापडणं । दूइहत्थो, दूईहत्थो । चामिअरं, चामीअरं । जंबुणदं, जंबूणदं । इत्यादिकं महाकविप्रयोगानुसृतेः, शुभप्रतीतेर्लोकव्यवहाराच्च स्वयं कल्पनीयम् ।

---

अच् को आदेश भिन्नस्वरूप दीर्घादि हो । व्यास ऋषिः, नं० ( १२ ) से ऋ को इकार । इससे विकल्प से अ इ मिलकर एकार, नं० ( २ ) से ष लोप ( ५ ) से सकार वासेसी, पक्ष मे वास इसी । एवम्—राजर्षिः के उक्त प्रयोग होंगे, कर्णपूरः । चक्रवाकः, कुम्भकारः । अन्धकारः, तव अपि मम अपि, केन अपि, राजकुलम्, राअ उलं । तुह अद्धं । मह अद्धं । पादपतनम्—पाअपडणं, गंगा उदकम् इत्यादिकों के उक्त प्रयोग सिद्ध होवे है । नं० ( १ )+६+२+१३+३+५+४+से कार्य करने से प्राकृत स्वरूप होता है ।

कहीं पर बहुलग्रहण से विकल्प से दीर्घ जानना । जैसे—वारि-मती, रि' की इकार को विकल्प से दीर्घ हो जायगा, वारीमई, पक्ष में वारिमई । नं० १ से त लोप । एवम्—वृति मूलम् मे नं० ( १२ ) से अकार । दीर्घविकल्प ।

---

नोट—नं० ( १३ ) इदृष्यादिषु । ( २ ) अधो मनयाम् । ( ५ ) शषोः सः । ( १ ) कगचजतदपयवां प्रायो लोपः । ( ३ ) सर्वत्रलवराम् । ( १२ ) ऋतोऽत् । ( ६ ) नो णः सर्वत्र । ( ८ ) खघथधभां हः । ( २० ) आदेर्योजः । ( १६ ) टो डः । ( १३ ) स्तस्य थः । ( ४ ) शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ । ( ३२ ) प्रथमद्वितीययोस्तृतीयचतुर्थौ ।

क्वचिदोकारस्य अत्वमपि—सिरवेअणा, सिरोवेअणा। सररुहं, सरोरुहं। मणहरं, मणोहरं। क्वचिन्नैवौकारस्य अत्वम्। मणोरहो, मणोहवो।

क्वचित् पूर्वपदान्तस्थस्य अकारस्य वा लोपः। राउलं, राअउलं। पापीढं, पाअपीढं। पालग्गो, पाअलग्गो। क्वचिद् हल्परस्यापि अचो नित्यमादिलोपः। तुम्हे एत्थ, तुम्हेत्थ। पूर्वपदस्थस्य–राइंदो। गइंदो। मइंदो। उविंदो। इंदोपो। दीवुज्जलो। मअरंदुज्जाणं। पमदुज्जाणं। महूसवो। क्वचिन्नित्यमिकारलोपः। तुहत्ति, महत्ति। गओत्ति, दइओत्ति। क्वचिद् यष्टिशब्दस्य वा लकारलोपः। चम्मट्ठी, चम्मलट्ठी। धम्मट्ठी,

---

वईमूलं। वेणुवनम्। केलिकला। तरिप्रवाहः, स्तुतिवादः, गिरिगमनम्, भानुरोधः, सानुगतः, साधुसमागमः। दीर्घविकल्प के अतिरिक्त ( नं० ६ + ४ + ६ ) से तत्तत्कार्य जानना।

कहीं पर विकल्प से ह्रस्व भी होता है। जैसे—यमुना तटम्, मे आकार को विकल्प से ह्रस्व करने पर, जउणतडं, पक्ष मे जउणातडं। नं० २० × ६ + १६ + ४ + ६ + २ + १३ + से प्रयोगोक्त अन्यकार्य जानना। नदी स्रोतः, बधूमुखम्, तालापतनम्, दूतीहस्तः, चामीकरम्, जम्बूनदम्। इत्यादि में विकल्प से ह्रस्व हुआ है। यह ह्रस्व दीर्घ व्यवस्था प्राकृत प्रयोक्ता महाकवियों के प्रयोग से, सुखप्रतीयमान उच्चारण से तथा लोक व्यवहार से स्वयं कर लेना चाहिये।

बहुल ग्रहण से कहीं ओकार को अकार भी होता है। शिरोवेदना। सरोरुहम्, मनोहरम्। कहीं पर ओकार को अकार नहीं होता है। मनोरथः, मनोभवः। यहां ओकार को अकार नहीं होगा। कहीं पर पूर्वपदान्तस्थ अकार का विकल्प से लोप होगा। जैसे—राजकुल का राउलं, राअउलं। एवं पादपीठं के पापीढं, पाअपीढं। पादलग्नः। कहीं हल् परे रहते भी आदिस्थ अच् का नित्य

---

नोट—( ५ ) शषोः सः ( १ ) कगचजतदपयवां प्रायो लोपः। (६) नोणः सर्वत्र। ( ६ ) खघथधभां हः। ( २+१२ ) ठस्य ढोपि वक्तव्यः। ( २ ) अधोमनयाम्। ( १२ ) ऋतोऽत्। ( २ + १६ ) दशादिषु हः ( १७ ) संख्यायाश्च। ( ३ ) सर्वत्र लवराम्। — इन सूत्रों से उक्त प्रयोग सिद्ध होंगे।

धम्मलट्ठी। क्वचिद्ग्रहणान्नेह । असिलट्ठी। बहुलग्रहणात् क्वचित्सन्धिरेव न भवति। मुहअंदो, परिअरो, उवआरो । पईवो, दुराआरो विआलो। क्वचित्सस्य लोपे ओत्वम्। परोप्परं। क्वचिद् एत्वम्, अन्तेउरं तेरह। तेवीसा। तेत्तीसा । क्वचिदेकस्मिन् पदेऽप्योत्वम् । पुणोपुणा। सर्वमपीदं महाकविप्रयोगात् प्रचलितप्रयोगाच्चावगन्तव्यम्। सर्वमपीदं यथायथं परावर्तयितुं विधातुं च शक्यते।

---

लोप होता है। तुम्हे एत्थ आदिस्थ एकार का लोप ; तुम्हे त्थ। कहीं अच् के परे नित्य अच् का लोप। राजेन्द्रः, राज इन्द्रः। रा इन्द्रो। गजेन्द्र:, गअइंदो। गइंदो मृगेन्द्रः, मअइंदो। मइंदो। उपेन्द्रः, इन्द्रगोपः। दीपोज्ज्वल., मकरंदोद्यानम्, प्रमदोद्यानम्, मधूत्सवः, राजेन्द्रादि शब्दों में अकार का लोप, मधूत्सव में उकार का। कहीं पर इकार का नित्य लोप हो। तुह इति। मह इति। गत इति। दयित इति। इतेस्तः पदादेः ( २+२८ )। इससे इकार को तकार हो जाने से तुह इति का तुहत्ति, मह इति का महत्ति इत्यादि में सर्वत्र तकार हो जायगा फिर तकारादेश के लिये इष्टि मानना निष्प्रयोजन है। कहीं पर यष्टि शब्द के लकार का विकल्प से लोप हो। चर्मयष्टिः, धर्मयष्टिः। बहुलग्रहण से कहीं लोप नहीं होगा। असियष्टिः। प्रायः संयुक्त वर्ण पूर्व रहते लकार का लोप होगा। कहीं सन्धि प्रयुक्त कुछ भी नहीं होगा। मुखचन्द्रः, परिकरः, उपकारः, प्रदीपः, दुराचारः, विकालः। कहीं सकार का लोप ओत्व होगा। परस्परम्। कहीं पर एकार। अन्तःपुरम्। त्रयोदश। त्रयोविंशतिः। त्रयस्त्रिंशत्। कहीं पर एक पद में भी ओकार। पुनः पुनः। यह सन्धिसंबन्धी भिन्न तरह का कार्य महाकवियों के प्रयोग से तथा प्रचलित प्रयोगों से जानना। प्राकृत प्रयोगों को देखकर कार्य की कल्पना कर वर्णागम वर्णविकार वर्ण लोप आदि की कल्पना कर लेना चाहिये। इसी तात्पर्य को लेकर—

बहुल पद का निर्वचन करते हुये पूर्वाचार्यों ने कहा है कि—जिस सूत्र मे बहुल पद पडा हो उसकी कहीं प्रवृत्ति हो और कहीं अप्रवृत्ति हो, कहीं विकल्प से उस सूत्रोक्त कार्य हों और कहीं अन्य ही प्रकार के कार्य हों। इस प्रकार विधि के अनेक प्रकार के आगम आदेशादि को देखकर चार प्रकार के बहुल पद प्रयुक्त

तथा चोक्तम्—

क्वचित्प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः, क्वचिद्विभाषा क्वचिदन्यदेव ।
विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति ।

**ऋतोऽत्** । १ । १२ । ऋकारस्य अत् स्यात् । तण्हा । नच्चं । कण्हो ।

**इदृष्यादिषु** । १ । १३ । ऋष्यादिषु शब्देषु वा इकारः स्यात् । इसी । मसिणं, मसणं । घिट्ठो, घट्ठो । विसहो, वसहो । दिढो, दढो । मिगो । गिट्ठी । किअं । गिद्धं । भिंगो, भिंगारो, सिंगारो, किपाणो । किपणो । किपा । सिआलो, हि (यं) अअं । विट्ठी, दिट्ठी । एवम्-

---

कार्यों को मानते हैं । तो तदनुरूप शब्द स्वरूप देखकर आदेशादि की कल्पना करके रूपसिद्धि करना ।

ऋत इति । ऋकार को अकार हो । तृष्णा । (नं० २६) से ष्ण को एह आदेश । नृत्यम् (नं १७) से त्य को चकार द्वित्व । कृष्णः । नं० २६ एह आदेश । द ठः इत्यादि मे पक्ष मे इससे अकार ।

इदृष्यादीति । ऋष्यादिक शब्दों मे विकल्प से इकार हो । 'वा' ग्रहण को व्यवस्थित विकल्प मान कर ऋषि मे तथा भृङ्गादिक मे नित्य इकार होगा । ऋषिः (नं० ५) से ष को स । मसृणम् । घृष्टः (नं० २+१२) से ष्ट को ठ । वृषभः (नं० ५) से ष को स । (६) से भ को हकार । दृढः । मृगः । गृष्टिः पूर्ववत् ठकार । कृतम् । गृध्रः (नं० ३) रेफ लोप । नित्य इकारादेश के उदाहरण । भृङ्गः । भृङ्गारः । शृङ्गारः । नं० ५ से श को स । कृपाणः । कृपणः । कृपा । शृगालः । नं० १ से ग लोप । हृदयम् । हियय प्रयोग प्रसिद्ध है । 'अवर्णो यः श्रुतिः' से यकार । हिअअं का उच्चारण असुखकर है । विष्टिः, दृष्टिः, सृष्टिः, । तीनों मे (नं० २+१२ से) ष्ट को ठ । ४ से द्वित्व । ७ से ट आदेश । वृथा, कृमिः, वृषध्वजः (नं० ५ से) ष को स । ३ से वलोप । द्वित्व, दकार पूर्ववत्

---

नोट—नं० (२६) ह्न स्न ष्ण क्ष्ण श्नां एहः । (१७) त्यथ्यद्यां चछजाः । (५) शषोः सः । (२+१२) ष्टस्य ठः । (६) खघथधभां हः । (३) सर्वत्र लवराम्

सिट्ठी। विथा। विसढ्ढओ। किती। किच्चा। धिई। दिट्ठंतो। निपो। अन्ये लोकव्यवहारात् ऋष्यादिषु-ऋत्वादिषु वा बोध्याः।

**उदृत्वादिषु। १। १४।** ऋत्वादिषु शब्देषु ऋकारस्य उः स्यात्। उदू। पउत्ती। वुत्तंतो। मुणालं। पुहवी। मुओ। पाउसो। परहुओ। भाउओ, जमाउओ। पिट्ठो, पुट्ठो। इह उभयमपि। पुहवी। मुसा, मुसावाओ। वरुणरुक्खो। इत्यादिपूकारः।

**पो वः। १। १५।** अनादौ विद्यमानस्य पकारस्य वः स्यात्। कवोलो, उल्लावो। कवालो, उवमा। सावो, सवहो। लिवी, निवो,

---

ज लोप १ से, कृतिः। कृत्या, नं० १७ से चकार, ४ से द्वित्व। धृतिः, दृष्टान्तः, नृपः। अन्यशब्द ऋष्यादिकों मे अथवा ऋत्वादिको मे लोक व्यवहार अथवा स्वरूपानुसंधान से जानना।

उदृत्वेति। ऋत्वादिक शब्दों मे ऋकार को उकार हो। ऋतुः। (नं० २६ से) त को द। प्रवृत्तिः वृत्तान्तः (नं० १० से अथवा ३२ से) आ को अकार। मृणालम्। पृथवी। (नं० ६ से) थ को हकार। मृतः। प्रावृट्। परभृत्। पूर्वोक्त ६ से भ को हकार। भ्रातृकः, जामातृकः। केवल क प्रत्यय रहित भ्राता का भाआ होगा। 'भाय' शब्द प्रसिद्ध है। जामाता का जमाआ होगा, यथादि से ह्रस्व। जमायी प्रसिद्ध है। पृष्ट यह ऋष्यादिकों मे और ऋत्वादिकों मे है। दोनों प्रकार के रूप मिलते हैं। पूठ पंजाव में, पीठ विहार यू. पी. आदि मे। पृथवी, मृषा, मृषावादः। वरुणवृक्षः। इत्यादि ऋत्वादि में जानना।

पो वः इति। अनादि मे विद्यमान पकार को वकार हो। कपोलः, उल्लापः, कपालः, उपमा। शापः, शपथः। नं० ५ से श को स। ६ से थ को हकार।

---

टिप्पणी(१)मृग शब्द का मओ, गृह का गद्धो, गृष्टिका गट्ठी इत्यादि वसन्तराज और सदानन्द मानते हैं, ये लोकव्यवहार-विरुद्ध हैं। व्यवस्थित विभाषा से भृङ्ग कृपण शृङ्गारादि शब्दों के समान इन मे भी नित्य ही इत्व होगा।

(२) कृपाण,—कृपण—कृपा में 'प' को व आदेश लोक विरुद्ध होने से सूत्र को वैकल्पिक मान कर नहीं लगेगा।

वआरो, उवगओ, उवलद्धी। कवोदो। कविला। अनादावित्युक्तेर्नेह ढमो, परिअरो, पराओ। परिणामो इत्यादि।

**टो डः। १। १६।** टस्य डः स्यात्। घडो। कडओ। पडो। अडवी। विडवी। सडा। धुज्जडी। णडो। रडणं। पाडली।

**त्यथ्यद्यां चछजाः। १। १७।** एषां यथासंख्यमेते आदेशाः स्युः। (त्यस्य) पच्चक्खो। मच्चलोओ। सच्चं। णिच्चं। किच्चा। आदिच्चो। पच्चूहो। अच्चओ। अवच्चओ। पच्चओ (थ्यस्य) रच्छा। मिच्छा। णेवच्छं। पच्छभोअणं। मिच्छादिट्ठी। तच्छवाणी। पच्छा। (द्यस्य) अज्ज। विज्जा। जूअं। मज्जं। पडिवज्जइ। अवज्जं। उज्जोओ। उज्जाणं। सज्जो। पज्जा।

---

नृपः। नं० १३ से ऋ को इकार। उपकारः, उपगतः, उपलब्धिः, नं० १ से ककार तकार का लोप। लब्धि मे नं० ३ से ब लोप, ४ से द्वित्व, ७ से धकार को दकार। कपोतः, कपिला, इत्यादिकों मे पकार को वकार होगा। आदिस्थ पकार को वकार नही होगा। यथा—पढमो, परिकरः, परागः, परिणामः। इत्यादिकों मे आदिस्थ पकार को वकार नहीं होगा।

टो डः इति। 'ट' को ड आदेश हो। घटः, कटकः, पटः, अटवी, विटपी, सटा, धूर्यटिः, नं० २१ से र्य को जकार द्वित्व। न० २+३० से ऊ को उकार। नटः, रटनम्। न० ६ से नकार को णकार।

त्यथ्येति। त्य थ्य द्य इनको क्रम से च छ ज ये आदेश हों। (त्य का) प्रत्यक्षः, मर्त्यलोकः, सत्यम्, नित्यम्, कृत्या। आदित्यः, प्रत्यूहः, अत्ययः, अपत्यकः, प्रत्ययः। (थ्य का) रथ्या, मिथ्या, नेपथ्यम्, पथ्यभोजनम्। पथ्य का 'पथ' प्रसिद्ध है। मिथ्या-दृष्टिः, तथ्यवाणी। पथ्या,। (द्य का) अद्य, विद्या, द्यूतम्, मद्यम्, प्रतिपद्यते, अवद्यम्, उद्योगः, उद्यानम्। सद्यः, पद्या।

---

नं० (५) शषोः सः। (६) खघथधभां हः। (१३) इदृष्यादिषु। (१) कगचजतदपयवां प्रायोलोपः। (३) सर्वत्र लवराम्। (४) शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ। (७) वर्गेषु युजः पूर्वः। (२१) र्यशय्याभिमन्युषु जः। (६) नो णः सर्वत्र। (२-३०) युक्ते ओत उत् आदीदूतां ह्रस्वश्च।

**अक्ष्यादिषु छः । १ । १८ । एषु क्षस्य छकारः स्यात् । खस्या पवादः । अच्छीइ । छीरं । छुरो । छारं । कुच्छी । इच्छू । मच्छिआ । लच्छणं । रिच्छो । लच्छी । कच्छा । चिच्छेव । सिच्छा । छुहा । छओ । छित्ती ।**

**ष्कस्कक्षां खः । १।१९। ष्कस्कक्ष इत्येतेषां वा खःस्यात् । सुक्खं, पक्षे सुक्कं । पुक्खरं, पुक्करं । णिक्खओ, णिक्कओ । णिक्खुहो, णिक्कुहो । णिक्खमणं । णिक्कमणं । ( स्कस्य ) खंधो । खंधसाला, मण्डूकप्लुत्या बहुलग्रहणमनुवर्त्यते, तस्य व्यवस्थितविभाषितत्वात्क्वचिन्न खादेशः । दुक्करं, णिक्कवो । दुक्किई, णिक्कासिओ । णिक्कला । सक्कअं, सक्कारो, णमक्कारो । तक्करो । मक्करो । उवक्करो ।**

---

अक्ष्यादिष्विति । अक्षि इत्यादिक शब्दों के 'क्ष' को छ आदेश हो । वक्ष्यमाण "ष्कस्कक्षां खः" इससे प्राप्त खादेश का अपवाद है । अक्षिणी, क्षीरम्, क्षुरः, क्षारम्, कुक्षिः, "इच्छू,—इक्खू, मच्छिआ,—मक्खिआ, लच्छणं—लक्खणं" इन मे छादेश और 'खादेश दोनों प्रकार के रूप देखे जाते हैं । रिच्छो, लच्छी, कच्छा, चिच्छेव सिच्छा, छुहा, छओ, छिती । इत्यादिकों मे सर्वत्र क्ष को छकारादेश होगा ।

ष्कस्केति । ष्क-स्क-क्ष इन को ख आदेश हो । शुष्कम्, नं० ५ से 'श' को 'स' । ४ से द्वित्व । ७ से ककार । पक्ष में नं० ८ से षलोप । ४ से द्वित्व । एवम्, पुष्करम् । निष्क्रयः । नं० ३ से रेफलोप । ६ से णकार । निष्कुधः । नं० ९ से घकार को हकार । अन्य कार्य पूर्ववत् । निष्क्रमणम् । ( स्क का ) स्कन्धः, स्कन्धशाला । इस सूत्र मे मण्डूकप्लुति से बहुलग्रहण की अनुवृत्ति करना । और अनुवर्त्यमान बहुलग्रहण को व्यवस्थितविकल्पार्थक होने से कहीं २

---

नोट—नं० (५) शषोः सः । (४) शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ । (७) वर्गेषु युजः पूर्वः । (८) उपरि लोपः कगडतदपषसाम् । (३) सर्वत्र लवराम् । (६) नो णः सर्वत्र । (९) खघथधभां हः ।

तिरक्कओ । (क्षस्य) जक्खो । रक्खसो । भिक्खा । पक्खेवो । णिक्खेव । खीरोदो । खमा । खणो । खारो । णक्खत्तं ।

**आदेर्यो जः । १ । २० ।** आदिभूतस्य यकारस्य जः स्यात् । जामिणी, जोव्वणं । जक्खो । जुवई । जती (ई) जहेच्छिअं । जुत्तिसंगओ । जोगो । जोजणं । जुअलं । आदावेवेत्युक्तेर्नेह । अवअवो । अअणं । वाअसो । दआ (या) लू । पओहरो । समासे भूतपूर्वमादित्वमादाय जकारः । बालजुवई । संजमो । अजोग्गो । संजोगो । णरजुअलं । रुद्दजागो । दीणजाचणा । वीरजोहो । खीणजवो । सुजाचओ ।

**ध्यह्ययोर्झः ।१।२१।** एतयोर्झः स्यात्, (ध्यस्य) संझा, वंझा,

---

पर 'ख' आदेश नहीं होगा । दुष्करम् । निष्कृपः । दुष्कृतिः, निष्कासितः, निष्कला, संस्कृतम् । नं० २ । २२ से अनुस्वार विकल्प । संस्कार । नमस्कारः ।' 'एसो-पंच णमुक्कारो" इस उकारयुक्त का भी आर्ष प्रयोग मिलता है । तस्करः, उपस्करः, तिरस्कारः । (क्ष का) यक्षः । राक्षसः । नं० २० से य को जकार । नं० २ । ३० से 'रा' को र । भिक्षा, प्रक्षेपः, निक्षेपः, क्षीरोदः । क्षमा । क्षणः। क्षारः । नक्षत्रम् । निक्षेप प्रक्षेप में नं० १५ से पकार को वकार ।

आदेरिति । आदिभूत यकार को जकार हो यामिनी । य को ज । नं० ६ से न को ण । योवनम् । नं० २+२३ से द्वित्व । यक्षः, युवतिः, यतिः । यथेप्सितम्, युक्तिसंगतः, योगः, योजनम्, युगलम्, आदि में विद्यमान ही यकार को जकार होगा । यहां नहीं होगा, जैसे अवयवः, अयनम्, वायसः, दयालुः, पयोधरः । समास होने पर भूतपूर्व आदि मानकर जकारादेश होगा । बालयुवतिः, संयमः, अयोग्यः, संयोगः, नरयुगलम्, रुद्रयागः । दीनयाचना । वीरयोधः, क्षीणयवः । सुयाचकः । लोप णकारादि पूर्ववत् जानना ।

ध्यह्ययोरिति । ध्य-ह्य-इनको झकार आदेश हो । जैसे (ध्य के) संध्या, वंध्या ध्य को झ आदेश । अनुस्वार से परे झकार है अतः द्वित्व नहीं होगा । क्योंकि

---

(२०) आदेर्यो जः । २ + २३ नीडादिषु ॥ (२१) सन्धौ अज्लोपविशेषा बहुलम् ।

उवज्झाओ, विंझायलो, मज्झो, सज्झाओ, अमेज्झो, बुज्झइ, अवज्झो, (ह्यस्य) सज्झं, गुज्झं, संणुज्झइ, मुज्झइ, वज्झं, संदिज्झइ, आणज्झं, णेज्झं, अणज्झं, अवगिज्झं, समुज्झं।

अत्सप्सां छः।१।२२। एषां छः स्यात्, लोपापवादः। (श्चस्य) णिच्छओ, पच्छिमं, पच्छाताओ, अच्छरियं। अस्य वैकल्पिकत्वात् अचरियं। पच्छिमद्धओ। पच्छओ। (त्सस्य) वच्छो। उच्छाहो। मच्छा। पिपिच्छा। मच्छरो। संवच्छरो। बुभुच्छा। (प्सस्य) लिच्छा, जुगुच्छा। अच्छरा। सुमुच्छा। तुतुच्छा। इत्यादि।

---

दीर्घ ईकार ऊकार और अनुस्वार से परे वर्ण को द्वित्व नहीं होता अतः अनुस्वार से परे झकार होने से द्वित्व नहीं हुआ। एवम्—विन्ध्याचलः में ध्य को झकार द्वित्वाभाव जानना, उपाध्यायः, मध्यः, स्वाध्यायः। नं० २+३० से ह्रस्व। अमेध्यः बुध्यते, अवध्यः। (ह्य के) सह्यम्, गुह्यम्। संनह्यते, मुह्यति। बाह्यम्, संदि-ह्यते। आनह्यम्। नेह्यम्। अनह्यम्, अवगृह्यम्, समूह्यम्। (नं० १३ से) णिज्झं में इकार। समूह्य में (नं० २+३० से) ऊ को उकार।

**र्यशय्याभिमन्युषु जः ।१।२३।** एषुः जः स्यात् । कज्जं । पज्जंतं । अज्जपुत्तो । धुज्जो । णिज्जाणं । पज्जायो । पज्जुपासणा । पज्जडणं । भज्जा । मज्जादा । सेज्जा । अहिमज्जू ।

**ऋत्वादिषु तो दः ।१।२४।** ऋतुतुल्येषु शब्देषु तकारस्य दः स्यात् । उदू । खादी । पतारिदो । रदी । पीदी । एषु दकारादेशः प्रायः शौरसेनी-मागध्योरेव द्रष्टव्यः, प्राकृते तु लोप एव ।

**हरिद्रादीनां रो लः ।१।२५।** हरिद्राशब्दसदृशेषु रेफस्य लः स्यात् । हलिद्दा, मुहलो, सुकुमालो, जुहिट्ठिलो । किलातो, पलिघा ।

**क्लिष्टश्लिष्टरत्नक्रियाशार्ङ्गेषु ततस्वरवत्पूर्वस्य ।१।२६।** क्लिष्टादिषु

---

र्यशय्येति । इन शब्दों के संयुक्त वर्ण को जकार हो । कार्यम्, पर्यन्तम्, आर्य-पुत्रः, धुर्यः, निर्याणम्, पर्यायः, पर्युपासना, पर्यटनम्, भार्या, मर्यादा, शय्या, अ-भिमन्युः । संयुक्त वर्ण पर रहने से नं० २+३० से ह्रस्व ।

ऋत्वादिष्विति । ऋतु सदृश शब्दों मे तकार को दकार हो । ऋतुः, ख्यातिः, प्रतारितः, रतिः, प्रीतिः । यह दकारादेश प्रायः शौरसेनी और मागधी मे ही होता है । प्राकृत में तकार का लोप होगा ।

हरिद्रेति । हरिद्रादिक शब्दों के रेफ को लकार आदेश हो, नं० ४ से रलोप, २ से द्वित्व । एवम् मुखरः, सुकुमारः, युधिष्ठिरः, नं० २० से जकार । ६से घ को हकार । ८ से ध लोप । ४ से द्वित्व, ७ से टकार । जुहिट्ठिलो । किरातः परिघा । पुलिसो, सुलसा ।

शब्देषु युक्तवर्णस्य विप्रकर्षो भवति, विकर्षे युक्तस्य पूर्ववर्णे तत्स्वरता च भवति। किलिट्ठं। सिलिट्ठं। रअणं, किरिआ, सारंगो।

इत् ह्रीश्रीक्रीतक्लान्तक्लेशम्लानस्वप्नस्पर्शदर्शहर्षार्हेषु ।१।२७। ह्रीश्री इत्यादिषु युक्तस्य विप्रकर्षः, पूर्वस्य च इकारः। हिरी, सिरी। किरीतो, किलंतो, किलेसो, मिलाणो, सिविणो। स्पर्शादिषु वेत्यनुवर्तते। तेन, फरिसो, पक्ते, फंसो। एवम्, दरिसणं, दंसणं। क्वचिन्नित्यम्। आदरिसो। हरिसो, अरिहो।

क्वचिदन्यत्रापि ।१।२८। युक्तवर्णस्य विप्रकर्षः, पूर्वस्य इकारः, तत्स्वरवत् वा क्वचिदन्यत्रापि भवति। यथा प्रयोगमनुसंधेयम्। अमरिसो, वरिसो। वरिसवरो। वरिहिणो, गरिहा, गरिभिणि, गरिवो। वरिगो, मिलाणो, गोसमो। पिलासो, पिलुट्ठो, सिणाऊ, सिलोओ, वइरं। तत्स्वरवत्, यथा—खमा, सला (हा) घा। क्वचिद्विकल्पेन। कसणो, कण्हो। पुरिमं, पुव्वं।

---

इकार ककार के पृथक्-करण में लगेगा, और 'ल' में तकार के साथ अकार लगैगा। क्लिष्टम्, श्लिष्टम्, क्रिया, इनमें इकार पृथक् वर्ण के साथ लगा। रत्न, शार्ङ्ग में अकार, क्यों कि 'ल' में और शार्ङ्ग में अकार है।

इदिति। ह्री श्री इत्यादिक शब्दों में संयुक्त वर्ण का विप्रकर्ष और विप्रकृष्ट पूर्ववर्ण के साथ इकार होगा। जैसे—ह्रीः, श्रीः, क्रीतः, क्लान्तः, क्लेशः, ग्लानः, स्वप्न में नित्य 'वा' पद की अनुवृत्ति करके स्पर्श, दर्श में विकल्प से र्श। स्पर्शः, मूल में उदाहरण उक्त है। दर्शनम्, आदर्शः, हर्षः, अर्हः।

क्वचिदिति। कहीं अन्यत्र भी युक्त वर्ण का विप्रकर्ष और विप्रकृष्ट पूर्व वर्ण के साथ इकार हो, तथा कहीं तत्स्वर-युक्त हो। व्यवहृत प्रयोगानुकूल कल्पना कर लेनी चाहिये। अमर्षः, वर्षः, वर्षवरः, वर्हिणः, गर्हा, गर्भिणी, गर्वः, वर्गः, म्लानः, ग्रीष्मो, लोध्रः, प्लुष्टः, स्नायुः, श्लोकः, वज्रम्। विप्रकृष्ट उत्तर वर्ण स्वरवत्। जैसे क्षमा का खमा, श्लाघा-सलघा। कहीं पर विकल्प से। कृष्णः का कसणो कण्हो। पूर्वः में विकल्प से इकार। पूर्वम् का पुरिमं, पुव्वं।

**ह्नस्नष्णक्ष्णश्नां ण्हः ।१।२६।** एषां ण्हः स्यात् । ह्नस्य—जण्हुतणया, अवण्हवो, वण्ही, जण्हू (स्नस्य) ण्हाणं । पण्हुदं । ण्हातको, ण्हुसा । जोण्हा, (ष्णस्य) विण्हू, जिण्हू । कण्हो । सतिण्हो, उण्हो, णिण्हाओ, भविण्हु ; जिण्हू ।(क्ष्णस्य)तिण्हं । निशितार्थे तु तिक्खं । सलण्हं। अहिण्हं । अहिक्खणं इति वयम् (श्नस्य) पण्हा, विण्हो, अण्हन्तो । अस्य वैकल्पिकत्वात् तिसणा, कसणो, किसणो इत्याद्यपि ।

**ह्नह्लेषु णलमां स्थितिरूर्ध्वम् ।१।३०।** एषु णलमां स्थितिरूर्ध्वं भवति । पुव्वण्हो, अवरण्हो, पण्हो । ह्नह्लेषु नलमां स्थितिरूर्ध्वमित्युक्तौ ह्नग्रहणस्वीकारे पूर्वसूत्रे ह्नग्रहणं व्यर्थमेव स्यात् । तस्मादत्र ह्नग्रहणं स्वीकर्तव्यम् । (ह्लस्य) कल्हारं, आल्हादो । पल्हादो । पण्हिण्णो ।

---

ह्नेति । इन वर्णों को ण्ह आदेश हो । (ह्न के) उदाहरण—जह्नुतनया, अपह्नवः, वह्निः, जह्नुः, (स्न के) स्नानम् । प्रस्नुतम्, स्नातकः, स्नुषा, ज्योत्स्ना, (ष्ण के) विष्णुः, जिष्णुः, कृष्णः, सतृष्णः, उष्णः, निष्णातः, भविष्णुः, जिष्णुः, (क्ष्ण के) तीक्ष्णम्, (नं० २+३) से ह्रस्व इकार । निशित-तीखा अर्थ मे तिक्खम् । श्लक्ष्णम् । नं० ८ से शकार का लोप । अभीक्ष्णम् । नं० ६ से भ को हकार । (२+३ से) इकार । कोई आचार्य अभिक्खणम् मानते हैं । (नं० २८ से विप्रकर्ष होगा ।) १६ से ख आदेश । ४ से द्वित्व । ७ से ककार । लोकप्रयोगानुकूल व्यवस्था जानना । (श्न के) प्रश्नः, विश्नः, अश्नन् ।

ह्न ह्ले ति । ह्नह्ल इन वर्णों मे णकार-लकार-मकार-की ऊर्ध्वस्थिति हो । अर्थात् वर्णव्यत्यय हो, (ह्न के उदाहरण –) पूर्वाह्णः, अपराह्णः, प्राह्णः । वसन्तराजादिक सूत्र में 'ह्न' ग्रहण मानते हैं, वह अयुक्त है, क्योंकि 'ह्न' इस पूर्वसूत्र से ण्हादेश सिद्ध ही था, फिर 'ह्न' ग्रहण व्यर्थ हो जायगा । और यहां

---

नोट—(२+३) इदीतः पानीयादिषु । (नं० ८) उपरि लोपः कगडतदपषसशाम् । (६)खघथधभां हः । (२८) क्वचिदन्यत्रापि । (१६) क्ष्क्स्कां खः । (२) शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ । (७) वर्गेषु युजः पूर्वः । (२+२२) चौर्यसमेषु रियः । (१०) अदातो यथादिषु वा । १२ इहष्यादिषु ।

( ह्रस्व ) जिम्हो, वम्हणो, वम्हपुत्तो, वम्हस्सं, ब्रम्हसू, वम्हाणी, बम्हचरियं, वम्ही, वम्हंडं। इति।

इदीषत्पक्वस्वप्नवेतसव्यजनमृदङ्गाङ्गारेषु १।३१। ईषदादिषु शब्देषु आदेरत इकारः स्यात्। इसि। पिक्कं। विप्रकर्षे इकारश्च। सिविणो।

---

तो ह मानना चाहिये 'ह्न' नहीं, क्योंकि फिर तो पूर्वाह्णः इत्यादि मे रहा-देश होही नहीं सकेगा। तस्मात्-'हह ह्म' मानकर हकार-णकार मानना चाहिये। 'ह्ल' के उदाहरण-कह्लारम्। आह्लादः, प्रह्लादः, प्रह्लिन्नः। ह्म के उदाहरण-जिह्मः, ब्राह्मणः, ब्रह्मपुत्रः, ब्रह्मस्वं, ब्रह्मसूः ब्रह्माणी, ब्रह्मचर्यम्। ( नं० २+१६ से र्य को रिय आदेश। ब्राह्मी नं० २+३० से आकार को अकार। ब्रह्माण्डम्।

इदीषदिति। ईषत्-पक्व स्वप्न-वेतस-व्यजन-मृदङ्ग और अङ्गार शब्द के प्रथम अकार को इकार हो। तात्पर्य यह कि ईषत्, वेतस, मृदङ्ग शब्दों मे आदिस्थ अकार नही है, परन्तु प्रथम अकार के ग्रहण से षकारगत तथा वेतस मे तकार-गत और मृदङ्ग मे दकारगत अकार का ग्रहण होगा। ईषत्-नं०२.३ से अथवा नं० ११ से ईकार को ह्रस्व। नं० ५ से षकार को सकार। प्रकृत सूत्र से इकार, नं० २+३४ से अन्त्य हल् का लोप। इसि। पक्वं। नं० ३ से वकार का लोप। ४ से द्वित्व। नं० २+३१ से इकार। पिक्कं। स्वप्नः। नं० २९ से सकार, वकार का विप्रकर्ष, पूर्व वर्ण के साथ इकार। नं० १५ से पकार को वकार। ३१ से इकार। ६ से णकार। २+३१ से ओकार। २+३४ से सुलोप सिविणो। वेतसः। नं० १+३१ से अकार को इकार। २+२७ से तकार को ड। वेडिसो। व्यजनम्। प्राकृतत्वात् पुंलिङ्ग। नं० २ से यलोप। ३१ से

---

नोट नं० २+३—इदीतः पानीयादिषु। ११ सन्धौ अज्लोपविशेषा बहुलम्। ५ शषोः सः। २+३४ अन्त्यस्य हलो लोपः। ३ सर्वत्र लवराम्। ४ शेषादे-शयोर्द्वित्वमनादौ। २+३१ इदीषत्पक्व०। २७ इत् ह्री श्री क्रीतक्लान्त क्लेश-म्लान-स्वप्न-स्पर्शादर्श-हर्षार्हेषु। १५ पो वः। ६ नो णः सर्वत्र। २-३१ अत ओत् सोः।

वेडिसो, विश्रणो, मिइङ्गो, इङ्गालो ।

**अनादावयुजोस्तथयोर्दधौ १।३२।** अनादौ विद्यमानयोरसंयुक्तयोस्तथयोर्दधौ स्तः । ( तस्य ) मारुदी । मन्तिदा । लदाओ । दिक्खिदो । कदम । साउंदलं । ताद । लम्भिदा । एदे । अदिकंतो । ( थस्य ) अध । गाधाओ । अधवा । कधा, जधाजधं ।

**प्रथमद्वितीययोस्तृतीयचतुर्थौ (१।३२।)** वर्गाणां प्रथमद्वितीययोस्तृ-

---

इकार । १ से जलोप ।६ से नकार को णकार । विश्रणो । मृदङ्गः । नं० १३ से ऋ को इकार । १ से दलोप । ३१ से इकार । मिइङ्गो । अङ्गारः । प्रकृतसूत्र ३१ से इकार । २५ से रेफ को लकार । इङ्गालो ।

अनादाविति । अनादि मे विद्यमान, असंयुक्त तकार थकार को दकार धकार हो । अर्थात् त को द, और थ को ध । तकार को जैसे—मारुतिः मन्त्रिता । नं० ३ से रेफ लोप । मन्तिदा । लताः । दीक्षिताः । नं० १६ से क्ष को ख । ४ से द्वित्व । ७ से ककार । २ + ३० से ईकार को ह्रस्व । प्रकृत ३२ से सर्वत्र तकार को द । एवम्-कतमं, शाकुन्तलम् , नं० ५ से श को स । १ से कलोप । उक्त प्रकृत सूत्र से 'त' को 'द' । इसी प्रकार, तात लम्भिता, एते, अतिक्रान्तः, इत्यादिकों मे सर्वत्र तकार को द आदेश होगा। थ के । अथ । गाथाः । अथवा । कथा । यथायथम् । समास होने पर पूर्व में आदिस्थ मान कर नं० २० से दोनों यकारों को जकार होगा, यहां सर्वत्र थकार को धकार होगा ।

प्रथमेति । कवर्गादि वर्णों के प्रथम और द्वितीय अक्षर को तृतीय और चतुर्थ हो । इस से पूर्व सूत्रस्थ तकार थकार को दकार धकारादेश गतार्थ है यह शङ्का नहीं करना। क्यों कि 'त' को 'थ' द' को 'ध' शौरसेनी में ही होगा, प्राकृत में लोपादिक ही होगा, और पूर्व सूत्र से शौरसेनी में नित्य द ध होंगे। यह वैकल्पिक करता

---

१ क ग च ज त द पयवां प्रायो लोपः । २५ हरिद्रादीनां रो लः । १६ ष्कस्कक्षां खः । ७ वर्गेषु युजः पूर्वः । ३० युक्ते ओत उत् आदीदूतां ह्रस्वश्च । २० आदेर्यो जः ।

तीयचतुर्थौ स्तः। एगो आया। एगोहं। विगई। एगलठाणा। (द्वितीयस्य) असढो। जढरो। कमढो। पूर्वसूत्रं तु शौरसेन्यामेव, अयं तु प्राकृतेऽपि। 'टो डः' इति नित्यार्थम्।

म्नज्ञपञ्चाशत्पञ्चदशेषु णः १।३३। म्नज्ञयोः पञ्चाशत्पञ्चदशयोर्णकारः स्यात्। म्नज्ञयोः संयुक्तत्वात्पञ्चाशत्पञ्चदशयोः संयुक्त एव वर्णो गृह्यते। पज्जुण्णो। जण्णो। विण्णाणं, पण्णवणा। विण्णत्ती। पण्णासा, पण्णरहो।

---

है। जैनागम तथा महाकवियों के प्रयोग से जानते हैं, कि असंयुक्त वर्णगत लोपादि आदेश प्रायः वैकल्पिक होते हैं। एकः आत्मा। एकोऽहं एगोऽहं णत्थि मे कोवि णाहमएणस्स कस्सइ। एवं अदीणमणसो अप्पाणमणुसासए' इत्यादि। विकृतिः। नं० १२ से ऋ को अकार। नं० १से तलोप। २+३५ से दीर्घ। २+३४ से सलोप। एकः स्वार्थ में प्राकृत एकलः। सर्वत्र ककार को गकार। एगलठाणा, एक प्रकार का जैन मत का व्रत है। द्वितीय को चतुर्थ। असठः। जठरः। कमठः। "असढेण समायरियं जं कज्जइ कारणे समाइएणं" इत्यादि। टो डः सूत्रसामर्थ्य से जानते हैं, प्रायः प्राकृतकार्य वैकल्पिक है, पूर्व में विशदरूप से वर्णन कर आये हैं।

म्नज्ञेति। म्न ज्ञ को और पञ्चाशत् पञ्चदश के संयुक्त 'ञ्च' को णकार हो, म्न ज्ञ संयुक्त है इससे संयुक्त 'ञ्च' लिया जायगा। प्रद्युम्नः। नं० ३ से रेफ लोप। १७ से द्य को जकार। ४ से द्वित्व। प्रकृत से णकार, द्वित्व ओत्व पूर्ववत्। पज्जुण्णो। यज्ञः। नं० २० से य को जकार। उक्त सूत्र से ज्ञ को ण। ४ से द्वित्व। विज्ञानम्। प्रज्ञापना। ३ से रेफलोप। ६ से णकार। उक्त सूत्र से ज्ञ को ण। द्वित्व। १५ से प को व। पण्णवणा। विज्ञप्तिः। नं० ८ से पलोप। द्वित्व। उक्त सूत्र से ज्ञ को ण। नं० २+३५ से इकार दीर्घ। विण्णत्ती। पञ्चाशत्।

---

नोट नं० १२ ऋ तोऽत्। १ क मचजतदपय वां प्रायो लोपः। २+३५ सुभिसुप्सु दीर्घः, २+३४ अन्त्यस्य हलो लोपः। ३ सर्वत्र लवराम्। ४ शेषादेशयो द्वित्वमनादौ। १७ त्यथ्यद्यां चछजाः। २० आदेर्यो जः। ६ नोणः सर्वत्र। १५ पो वः। ८ उपरि लोपः कग तद यषशस्साम्। ५ शषोः सः। २+३२

**ष्मपक्ष्मविस्मयेषु म्हः १।३४।** ष्म इत्येतस्य पद्मविस्मययोश्च युक्तस्य वर्णस्य म्ह स्यात्। ष्म इत्यनेन सह निर्दिष्टत्वात् पद्मविस्मययोः संयुक्तयोरेव ग्रहणम्। गिम्हो। उम्हा। कुम्हण्डो। दुम्हलो। पम्हो। विम्हओ।

इति श्रीम० म० मथुराप्रसादकृते पाली-प्राकृत-व्याकरणे प्रथमोध्यायः।

---

नं० ५ से श को स। २ + ३२ से आकार। ११ से सवर्ण दीर्घ। प्रकृत सूत्र से ण कार। ४ से द्वित्व। पण्णासा। पञ्चदशः। उक्त सूत्र से ञ्च को ण कार द्वित्व। नं० २ + १८ से द को रेफ। २ + १७ से हकार ओत्वादि पूर्ववत् पण्णरहो

ष्मपद्मेति। ष्म इस को पद्म तथा विस्मय शब्द के संयुक्त वर्ण को म्ह आदेश हो। ष्म यह संयुक्त वर्ण है अतः पद्म और विस्मय शब्द का संयुक्त ही वर्ण का ग्रहण होगा। ष्म—ग्रीष्मः, ऊष्मः, कूष्माण्डः। नं० ३ से रेफलोप, प्रकृत सूत्र से म्ह आदेश। तीनो में नं० २ + ३० से ईकार ऊकार आकार को ह्रस्व। दुष्मलः, उक्त सूत्र से म्ह आदेश। सु का लोप ओकार पूर्ववत्। दुम्हलो। पद्मः। विस्मयः। उभयत्र म्ह आदेश नं० २ से यलोप ओत्वादि पूर्ववत्। पम्हो, विम्हओ।

इति श्री म० म० मथुराप्रसादकृते पालीप्राकृतव्याकरणे
सुबोधिन्यां प्रथमोऽध्यायः

---

# द्वितीयोऽध्यायः—

**अन्मुकुटादिषु।२।१।** मुकुटादिषु शब्देषु आदेरुकारस्य अत् स्यात्। मउडं, मउलं, अवरि, गरू, बाहा, गणिअं।

---

अन्मुकुटेति। मुकुटादिक शब्दों मे आदि उकार को अकार हो, मुकुटम्, मुकुलम्; उपरि, गुरुः, बाहू, गणितम्। नं० १ से ककार तकार का लोप। नं० १५ से प को व। १६ से ट को ड।

---

त्रियमात्। ११ सन्धौ अज्लोपविशेषा बहुलम। २ + १७ दशादिषुहः। २ + १८ संख्यायाश्च रः। २ + ३० युक्ते ओत उत् आदीदूतां ह्रस्वश्च। अधो मनयाम्। इति।

नोट—(१) क ग च ज त द प य वां प्रायो लोपः। (१५) पो वः १६ से

**उदूतो मधूकादिषु ।२।४।** एषु ऊकारस्य उत् स्यात् । महुओ, मुक्खो, कुम्हण्डं, सुद्दो उद्धं, सुत्तो, सुत्ती, भुज्जपत्तं, सुण्णं, उम्मी, चुण्णं उण्णा, दुव्वा, धुत्तो, पुव्वो, धुज्जडी । मुच्छा, मुल्लं । सुज्जो । इत्यादि । मम मते तु संयुक्ताक्षरपरत्वात् 'युक्ते ओत उत् आदीदूतां ह्रस्वश्चे'ति ह्रस्वः । गणेषु पाठो गौरवकृदेव । सर्वोऽप्ययं संयुक्ताक्षर परत्वे मधूकादिष्ववगन्तव्यः, एवमाकारस्य संयुक्ताक्षरे ह्रस्वे, यथादिष्विति विवेकः ।

**उत्सौन्दर्यादिषु ।२।५।** सौन्दर्यादिषु शब्देषु औकारस्य उत्स्यात् । सुन्देरं, सुंडो, पुलोमी, उवविट्ठअं, मुट्ठिओ, दुआरिओ । आदिग्रहणात् । उदुंबरो, उद्धदेहिओ, मुंजाअणो, मुग्गीणो, तुंदिओ कुक्खे (य) (अ) ओ,

---

उदूत इति । मधूकादिक शब्दों की ऊकार को ह्रस्व उकार हो । मधूकः । मूर्खः, कूष्माण्डः, शूद्रः, ऊर्ध्वम्, सूत्रम्, सूक्तिः भूर्जपत्रम्, शून्यम्, ऊर्मिः, चूर्णम् ऊर्णा । एवम्, दूर्वा, धूर्तः, पूर्वः, धूर्जटिः मूर्च्छा, मूल्यम्, सूर्यः. यहां सर्वत्र युक्ताक्षर परे रहने पर ऊकार को ह्रस्व होता है और वे सब मधूकादिक में माने जाते हैं । संयुक्त पर रहने से ह्रस्व होगा । इसी प्रकार संयुक्ताक्षर के परे आकार को अकार होगा । और वे यथादिक में माने जायँगे । वस्तुतः २+३० से संयुक्त वर्ण पर रहने पर ह्रस्व हो जायगा, यथादिक मे मानना गौरव है ।

उत्सौन्दर्येति । सौन्दर्यादिक शब्दों मे विद्यमान औकार को उकार हो । सौन्दर्यम् । नं० २+८ से एकार । शौण्डः, नं० ५ से श को सकार । पौलोमी । औपविष्टकम्, नं० १५ से प को व । (२+१२) से ष्ट को ठ । ४ से द्वित्व ७ से ट्ठकार । १ से कलोप । मौष्टिकः, दौवारिकः, आदिग्रहण से अन्यत्र भी होगा । औदुम्बरः । और्ध्वदैहिकः, नं० ३ से रेफ वकार का लोप । मौञ्जायनः । ६ से न को ण मौद्गीनः, तौन्दिकः (तोंदिया इति लोके) कौक्षेयकः । पौर्णमासी

---

नोट—(२+८) ए शय्यादिषु । (५) शषोः सः । (१५) पो वः । (२+१२) ष्टस्य ठः । (४) शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ । (७) वर्गेषु युजः पूर्वः (१) क ग च ज त द प य वां प्रायो लोपः । (३) सर्वत्र लवराम् । (६) नो णः सर्वत्र ।

पुण्णमासी, पुक्खरो, मुहुत्तिओ, सुगंधिओ ।

**इत एत्पिण्डसमेषु वा ।२।६।** पिण्डसदृशेषु शब्देषु इकारस्य एकारो वा भवति । पेण्डं, पिंडं । सेंदूरं, सिंदूरं । धम्मेल्लो, धम्मिल्लो । वेण्हू, विण्हू । वेल्लं, विल्लं । वेट्ठी, विट्ठी । व्यवस्थितविभाषितत्वात्कचिन्नित्यम्, क्वचिद्विकल्पः । केंसुओ, केंचुलओ । छेद्दो, छेद्दिओ । तेंदुओ । मेहिरिआ । विदारिक्खंधो, वेदारिक्खंधो । सिहमलो । सेहमलो ।

**ऐत एत् ।२।७।** ऐकारस्य एत् स्यात् । सेलो, केलासो, सेण्णं, वेरं, तेल्लं, एरावणो, केदारिओ, केवट्टो, गेरिओ । चेत्तरहो, चेलं, देवो, नेपाली, परेहिओ, वेजअंती, वेतरणी, वेतालिओ, सुहेसिणी, जोगेकांतिओ, धम्मेकपओ, जलेक्कं ।

**ए शय्यादिषु ।२।८।** शय्यादिषु शब्देषु अकारस्य एकारः स्यात् । सेज्जा, सुंदेरं, वेल्ली, तेरह, उक्केरो, अच्छेरं, अणुमेत्तं, वेंटं ।

---

पौष्करः, मौहूर्तिकः, सौगन्धिकः । (सुगन्धिया—इति लोके)

इत इति । पिण्ड सदृश शब्दों में इकार को विकल्प से एकार हो । पिण्डम्, सिन्दूरम्, धम्मिल्लः, विष्णुः । बिल्वम्, विष्टिः । वा यह व्यवस्थित विकल्पार्थक है, इसलिए कहीं नित्य और कहीं विकल्प से होगा । किंशुक, किञ्चुलकः, छिद्रः छिद्रितः, तिन्दुकः, मिहिरिका । विदारीस्कन्धः । सिध्मलः । ( सेहुआं रोगवाला )

ऐत इति । ऐकार को एकार हो । शैलः, कैलाशः । सैन्यम्, वैरम्, तैलम् (२ + २३ ) से लकार द्वित्व । ऐरावणः, कैदारिक, कैवर्तः, गैरिकः, चैत्ररथः, चैलम्, दैवः, नैपाली, परैहितः, वैजयन्ती, वैतरणी, वैतालिकः, सुखैषिणी । योगैकान्तिकः, धर्मैकपदः, जलैक्यम् ।

ए शय्यादीति । शय्यादिक शब्दों में अकार को एकार हो । शय्या । सौन्दर्यम् । वल्ली । त्रयोदश, इस का साधुत्व आगे है । उत्करः, नं ८ से त लोप द्वित्व । आश्चर्यम्, अणुमात्रम्, वृन्तम् ।

---

( ८ ) उपरि लोपः क ग ड त द प ष स शाम् ।

**औत ओत् ।२।९।** औकारस्य ओत् स्यात् । सोहग्गं, दोहग्गं, जोव्वणं, कोसंवी, कोत्थुहो, सोमित्ती, कोमुदी । गोतमो । मोणं । रोरवो । चोरो । धोरेओ । कोपीणं । पोलत्थो ।

**उत ओत्तुण्डसमेषु ।२।१०।** तुण्डसदृशेषु शब्देषु उकारस्य ओकारः स्यात् । तोंडं, पोक्खरो, मोत्थं, पोत्थअं, मोग्गरो, लोद्धओ, पोण्डरीअं, पोक्खरिणी, लोद्धो ।

**ऋ रीति ।२।११।** ऋ इत्यस्य रि इत्यादेशः स्यात् । रिणं, रिद्धो, रिच्छो, रिदुमई, रिद्धी, रित्तिओ ।

---

औत इति । औकार को ओकार हो । सौभाग्यम् । नं० २ से य लोप, ४ से द्वित्व १० से आ को अकार । ६ से भ को हकार । दौर्भाग्यम् । ३ से रेफ लोप । यौवनम् । नं० २० से जकार । ६ से न को णकार । (२+२३) से वकार द्वित्व । कौशाम्बी । ५ से श को सकार । कौस्तुभः । (२+१३) से स्त को थ । ४ से द्वित्व ७ से तकार । सौमित्रिः । कौमुदी । गौतमः । मौनम् । रौरवः, चौरः, धौरेयः, कौपीनम् । पौलस्त्यः ।

उत इति । तुण्ड सदृश शब्दों में उकार को ओकार हो । तुण्डम्, पुष्करः । नं० १६ से ष्क को खः, द्वित्व, ककार । मुस्तम् । पुस्तकम् । मुद्गरः । लुब्धकः । बलोप, धकार द्वित्व, दकार । लोद्धओ । पुण्डरीकम् , पुष्करिणी । लुब्धः (लोध-जातिविशेष लोक में प्रसिद्ध है )

ऋ इति । ऋ को रि आदेश हो । ऋणम् । ऋद्धः, ऋक्षः, ऋतुमती, ऋद्धिः ऋत्विजः ।

---

नोट—( ३ ) अधोमनयाम् । (४) शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ । (१०) अदातो यथादिषु वा ( ६ ) ख घ थ ध भां हः । ( ३ ) सर्वत्र लवराम् । ( २० ) आदेर्यो जः । ( ६ ) नो णः सर्वत्र । ( २ + २५) नीडादिषु । (२ + १३) स्तस्य थः ( ५ ) शषोः सः । ( ७ ) वर्गेषु युजः पूर्वः । ( १६ ) ष्कस्कयोः खः ( १३ ) इदष्यादिषु ।

मुहुत्तो, कत्तरी, आवत्तो, कित्ती, वत्ता, अत्तो, भत्ता, कत्ता। इत्यादि।

**दशादिषु हः ।२।१७।** दशादिषु शस्य हः स्यात्। दह, एआरह, बारह, तेरह, चउद्दह, पण्णरह, सोलह, सत्तरह, अट्ठारह। वेत्यपकर्षात् कचिन्न। दसमी अवत्था। दससु दिसासु।

**संख्यायाश्च रः ।२।१८।** संख्यावाचिनि शब्दे अयुक्तस्यानादौ स्थितस्य दस्य रेफादेशः स्यात्। एआरह, बारह, तेरह, पण्णरह, सत्तारह, अट्ठारह। अयुक्तस्येत्युक्तेर्नेह। चउद्दह। आदिस्थत्वान्नेह। दह।

**उत्तरीयानीययोर्यो ज्जो वा २।१९।** एतयोर्यस्य ज्जो वा स्यात्।

---

कर्ता। मेरे मत से २+३० से सर्वत्र ह्रस्व।

दशादीति। दशादिक शब्दों में शकार को हकार हो। दश शब्द के शकार को हकार होगया। दह। एकादश। नं० १ से क लोप। वक्ष्यमाण २–१८से दकार को रेफ। एआरह। द्वादश नं० ८ से द लोप। त्रयोदश। ३ से रेफ लोप। ११ से अकार, विसर्ग को एकार। चतुर्दश, ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। पञ्चदश। 'ञ्च' को ण आदेश, द्वित्व। षोडश। ५ से ष–को सकार। सप्तदश। ८से प लोप। ४से द्वित्व। २+१८से द को रेफ। अष्टादश। नं० २+१२ से ष्ट को ठ। द्वित्वादि। कहीं हकार नहीं भी होगा, जैसे दसमी, दससु दिसासु।

संख्याया इति। संख्यावाची शब्दों में अयुक्त अनादिस्थ द को रेफ हो, साधुत्व पूर्ववत्। एकादश, द्वादश, त्रयोदश, पञ्चदश, सप्तदश, अष्टादश। चतुर्दश में रेफ से संयुक्त दकार है, दश में आदिस्थ है, अतः रेफ नहीं होगा।

उत्तरीयेति। उत्तरीय शब्द, और अनीय प्रत्यय की यकार को विकल्प से द्वित्व

---

(१) क ग च ज त द प य वां प्रायो लोपः। (२+१८) संख्यायाश्च (८) उपरि लोपः क ग ड त द प ष स शाम्। (३) सर्वत्र लवराम्। (५) शषो सः। (११) सन्धौ अज्लोपविशेषा बहुलम्। (२+१२) ष्टस्य ठः। उत्तरीय० १९ सूत्र में द्वित्व 'ज्ज' आदेश से जानते है, जहां संयुक्त वर्ण के स्थान में आदेश होगा वहीं द्वित्व होगा, अतः हलिद्दा में लकार द्वित्व नहीं होगा।

उत्तरिज्जं, उत्तारीअं। रमणिज्जं, रमणीअं। करणिज्जं, करणीअं। भरणिज्जं, भरणीअ। हसणिज्जं, हसणीअं। समरणिज्जं, समरणीअं।

**चौर्यसमेषु रियः ।२।२०।** चौर्यसदृशेषु शब्देषु रिय इत्ययमादेशः स्यात्। चोरियं, महुरियं, अच्छरियं, सोरियं, थेरियं, धोरिओ, आआरिओ, कोरियं, पोरियं, मोरियो, तोरियं।

**वक्रादिषु बिन्दुः ।२।२१।** वक्रादिषु शब्देषु अनुस्वारागमः स्यात्। वंको, तंसो, वअंसा, अंसुं, माणंसिणी, फंसो, णिअंसणं, सुंकं, पडिंसुअं।

**मांसादिषु वा ।२।२२।** मांसादि-शब्देषु वा बिन्दुः। तेन क्वचि-

---

'ज्ज' यह आदेश हो। उत्तरीयम्। रमणीयम्, करणीयम्, हसनीयम्, समरणीयम्।

चौर्येति। चौर्यशब्द के समान शब्दों में विद्यमान 'र्य' इस को रिय आदेश हो। चौर्यम्। नं० (२+६ से ओकार। माधुर्यम्। १० से अकार। ६ से हकार। आश्चर्यम्। २२ से छ। ४ से द्वित्व। ७ से चकार। १० से आ को अकार। शौर्यम्। ५ से श को स। २+६ से औ को ओ, स्थैर्यम्। ८ से स लोप २+७ से ऐ को ए। एवम् धौर्यः, आचार्यः, कौर्यम्, पौर्यम्, मौर्यम्, तौर्यम्,

वक्रेति। वक्रादिक शब्दों में अनुस्वार का आगम हो। वक्रः। नं० ३ से रेफ लोप। त्र्यस्रम् नं० २ से य लोप। वयस्या। अश्रु। मनस्विनी। (२+२ से) अकार को आकार। स्पर्शः। २+१४ से फ आदेश। निदर्शनम्। १ से दलोप। शुल्कम्। प्रतिश्रुतम्।

मांसादीति। मांसादिक शब्दों के बिन्दु का लोप हो। मसम्, नं० १० से अकार। कथम्। २+२ से आकार। ६ से थ को ह। नूनम्। ६ से न को

---

नोट—नं० (२+६) औत ओत् (१०) अदातो यथादिषु वा (६) ख घ थ ध भां हः (२२) श्चत्सप्सां छः (२) शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ। (७) वर्गेषु युजः पूर्वः। (५) शषोः सः। (८) उपरि लोपः, क ग ड त द प ष स शाम्। (२+७) ऐत एत्। (४३) सर्वत्र लवराम्। (३) अधो मनयाम्। (२। २) आ समृद्ध्यादिषु (६) नो णः सर्वत्र। (१२) अतोऽत्। (आदेर्यो जः।

द्विन्दुलोपः, क्वचिद् बिन्दुस्थितिः। मासं, मंसं। काहं, कहं। णूण, णूणं। दाणि, दाणीं। समुहो, संमुहो। क्वचिन्नित्यम्। सक्कारो, सक्कअं।

**नीडादिषु द्वित्वम्** ।२।२३। नीडादिषु शब्देषु द्वित्वं स्यात्। णेड्डु, जोव्वणं, तुण्हिक्को, पेम्मं, एक्को, वाहित्तो, उज्जुओ, सोत्तो, चल्लिओ, मंडुक्को।

**पौरादिष्वउत्** ।२।२४। एषु अउत् स्यात्। पउरो, पउरिसं, मउणं, मउली, रउरवो, कउरवा, गउडा, कउसलं, सउहं, कउलं, गउणो, चउलं, मउरिओ।

**अवर्णो यः श्रुतिः** ।२।२५। अकारस्य क्वचिद् यकारः स्यात्। प्रायः मागध्यामर्द्धमागध्यां चास्य प्रयोगो भवति। वियसियं। णमंसिया। ण य कयं। सयणाणि य। गोयमो। वयणं। जीवियं। गोयरी। सयलं। भायणं।

---

णकार। इदानीम्। संमुखः। कहीं पर नित्य अनुस्वार का लोप हो। संस्कारः, संस्कृतम्। १२ से ऋ को अकार।

नीडादीति। नीडादिक शब्दों में द्वित्व हो। २+८ से एकार। ६ से ण कार णेड्डु। यौवनम्। २० से य को जकार। तूष्णीकः। २९ से ण्ह। २+४ से ऊ को उकार। २+३ से ई को इकार। प्रेम। एकः। व्याहृतः। ऋजुकः। श्रोतः। चलितः, मण्डूकः। २+३० से उकार।

पौरेति। पौरादिक-अर्थात्-पौर सदृश वर्णों में औकार को अउ आदेश हो। पौरः, पौरुषम्, मौनम्, मौलिः, रौरवः, कौरवः, गौडाः, कौशलम्, सौधम्, कौलम्, गौणः, चौलं, मौर्यः।

अवर्ण इति। अकार को कहीं यकार हो। यह यकार प्रायः मागधी और अर्धमागधी में होगा। विकसितं, नमस्कृतः, न च, कृतम्, शयनानि, च। गौतमः, वचनम्, जीवितम, गोचरी, सकलम्, भाजनम्।

---

नोट—२।८ ए शय्यादिषु। ६ नो णः सर्वत्र। २९ ह्न स्न ष्ण क्ष्ण श्नां ण्हः। २।३ इदीतः पानीयादिषु। (२+३०) युक्त ओव उत् आदीदूतां ह्रस्वत्वं

**वसतिभरतयोर्हः** ।२।२६। एतयोरन्त्यस्य तस्य हः स्यात्। वसही। भरहो राया। भारहे वरिसे चंपा णयरी त्थि।

**प्रतिसरवेतसपताकासु डः** ।२।२७। एषु तकारस्य डः स्यात्। पडिसरो। प्रतेरुपलक्षणमेतत्। तेन पडिवेसो, पडिलेहणा, पडिक्कमणं, पडिहारो, पडिणायगो, इत्यादि सिद्धम्। वेडिसो, पडागा, विजअपडागा।

**इतेस्तः पदादेः** ।२।२८। इतीति पदस्यादौ विद्यमानस्य इकारस्य

---

वसतीति। वसति और भरत शब्द के तकार को हकार हो। वसतिः—तकार को हकार हो गया। नं० २।३५ से इकार को दीर्घ। २।३४ से सकार का लोप। वसही। भरतः। तकार को हकार। नं० २।३१ से ओकार। पूर्ववत् स लोप भरहो। एवम् भारहे वरिसे चंपा णाम णयरी।

प्रतीति—प्रतिसर, वेतस, पताका शब्दों में तकार को ड आदेश हो। प्रतिसरः। त को ड आदेश। नं० ३ से रेफ लोप।२।३१से ओकार। पूर्ववत् स लोप। पडिसरो। प्रतिसर शब्द प्रतिमात्र का उपलक्षक है, अतः—प्रतिवेशः। उक्त सूत्र से त को ड। नं० ५ से श को स। ३ से रेफ लोप। २।३१ से ओकार। पडिवेसो। एवम्—प्रतिलेखना का पडिलेहणा। प्रतिक्रमणम् का पडिक्कमणं। प्रतिहारः का पडीहारो। प्रतिनायकः का पडिणायगो। वेतसः। उक्त सूत्र से तकार को ड आदेश। नं० ३१ से अकार को इकार। नं० २। ३१ से ओकार। पूर्ववत् स लोप। वेडिसो। पताका, उक्त सूत्र से तकार को ड आदेश। नं० ३२ से ककार को गकार, नं० २। ३४ से स लोप। पडागा। प्राकृत में क लोप करने से पडाआ। एवम्—विजयपडागा, विजयपडाआ का साधुत्व जानना।

इतेरिति। 'इति' इस पद के आदि में विद्यमान इकार को तकार हो। प्रियतर इति। उक्तसूत्र से इकार को स्वररहित 'त' आदेश होगया। पिअदरो त्ति। रेफ लोप द ओकार पूर्ववत् जानना। एवम्—सः गतः इति। सो गओ त्ति। सागरः

---

नोट—२। ३५ सुभिसुप्सु। दीर्घः। २। ३४ अन्त्यस्य हलः। २। ३१ अत ओत् सोः। ३ सर्वत्र लवराम्। ५२ शषोः सः। ३१ इदीषत्पक्वस्वप्नवेतसव्यजनमृदङ्गाङ्गारेषु। ३२ प्रथमद्वितीययोस्तृतीयचतुर्थौ॥

केवलः स्वररहितस्तकारः स्यात् । पिअद्रो त्ति तक्कमि। सागरो त्ति कहिअं

**इत् पुरुषे रोः ।२।२६।** पुरुषशब्दे विद्यमानस्य रोरुकारस्य इत्स्यात । पुरिसो ।

**युक्ते ओत उत् आदीदूतां ह्रस्वश्च । २ । ३० ।** युक्ते वर्णे परतः पूर्वस्य ओकारस्य उत् स्यात् आदीदूतां च ह्रस्वः । पुग्गलिओ, मुग्गलिओ। पुक्खरिओ, पुण्णिमा। अज्जो । अत्ताणं। अस्समो । गिम्हो।

---

इति । सागरो त्ति । इत्यादि पूर्वोक्त सूत्रों से सिद्ध होते हैं ।

इदिति । पुरुष शब्द में विद्यमान रु के उकार को इकार हो । पुरुषः—उकार को इकार । नं० ५ से षकार को सकार । पूर्ववत् ओत्व, स लोप । पुरिसो । इस का 'रसोर्लशौ' इस हैम व्या० से र को ल, स को श करने से पुलिशे होता है ।

संयुक्त वर्ण से पूर्व में विद्यमान ओकार को उकार हो और आकार ईकार ऊकार को ह्रस्व हो । पौद्गलिकः । नं० २।६ से औकार को ओकार उक्त सूत्र से ओकार को उकार । नं० ८ से द लोप । ४ से गकार द्वित्व । १ से क लोप । ओत्व स लोप पूर्ववत् । पुग्गलिओ । एवम्—मौद्गलिकः का मुग्गलिओ । पौष्क-रिकः । ओकार उत्व पूर्ववत् । नं० १६ से ष्क को ख । नं० ४ से द्वित्व । ७ से ककार । ओकार—स लोप पूर्ववत् । पुक्खरिओ । पूर्णिमा । नं० ३ से रेफ लोप । उक्त सूत्र से उकार को ह्रस्व । पुण्णिमा । आर्यः । नं० २१ से र्य को जकार। ४ से द्वित्व । उक्त सूत्र से आकार को ह्रस्व । ओकार सुलोप पूर्ववत् । अज्जो आत्मानम् । नं० २ से मकार का लोप । ४ से त द्वित्व । ६ से नकार को णकार । उक्त सूत्र से संयुक्त तकार परे रहते आकार को ह्रस्व अत्ताणं । आश्रमः । नं० ३ से रेफ लोप । ५ से सकार । ४ से द्वित्व । उक्त सूत्र से आकार को ह्रस्व । अस्समो । ग्रीष्मः । नं० ३४ से ष्म को म्ह । ईकार को उक्त सूत्र से ह्रस्व । गिम्हो । दीक्षितः । नं० १६ से क्ष को ख । ४ से द्वित्व । ७ से ककार । ईकार

---

नोट—६औत ओत् ।८ उपरिलोपः कगडतदपषशसाम् ।५ शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ। १ कगचजतदपयवां प्रायो लोपः । १६ ष्क स्क क्षां खः । ७ वर्गेषु युजः पूर्वः । ३ सर्वत्र लवराम् । २१ र्य शय्याभिमन्युषु जः । २ अधोमनयाम् ६ नो

दिक्खिओ। मुक्खो। धुत्तो। मुच्छिओ। इत्यादि।

**अत ओत्सोः। २। ३१।** सोःपूर्वस्य अकारान्तप्रातिपदिकस्य अतः ओत् स्यात्। अन्त्यस्य हल इति सुलोपः। रामो। गामो। सव्वो। चलो। वरो। हरो। कामो। गोइंदो। चंदो। इंदो। इत्यादि।

**स्त्रियामात्। २। ३२।** स्त्रियां वर्तमानस्य अन्त्यस्य हल आकारः स्यात्। लोपापवादः। संपआ। विपआ। वाआ। सरिआ।

**नपुंसके सोर्बिन्दुः। २। ३३।** नपुंसके विद्यमानात्प्रातिपदिकात् परस्य सोर्बिन्दुः स्यात्। लोपापवादः। वयणं। करणं। रअणं।

---

को उक्त सूत्र से ह्रस्व। दिक्खिओ। मूर्खः। ऊकार को ह्रस्व। अन्य कार्य पूर्ववत्। मुक्खो। धूर्तः का धुत्तो। मूर्छितः का मुच्छिओ। तत् गण में पाठ मानने की अपेक्षा सूत्र मानना ठीक है।

अत इति। अकारान्त प्रातिपदिक के सु से पूर्व में विद्यमान अकार को ओकार हो। उकार इत्। २।३४ से स लोप। रामः—रामो। ग्रामः + गामो। सर्वः—सव्वो। चलः—चलो। वरः—वरो। हरः—हरो। कामः—कामो। गोविन्दः + गोइंदो। चन्द्रः—चंदो। इन्द्रः—इंदो।

स्त्रियामिति स्त्रीलिङ्ग में विद्यमान अन्त्य हल को आकार हो। लोप का बाधक है। संपद्। सु का लोप। 'द' को आकार। संपआ। विपद् का विपआ। वाच् का वाआ। सरित् का सरिआ। यह आकारादेश प्रायः स्पर्शान्त ञ म ङ ण न से रहित ककार से लेकर मकार पर्यन्त प्रायः चकारान्त दकारान्तादिक शब्दों में होता है। उदाहरण तदनुरूप ही अधिक देखे जाते हैं।

नपुंसके इति। नपुंसक लिङ्ग में विद्यमान प्रातिपदिक से पर सु को अनुस्वार हो। लोप का अपवाद है। वचनम्। नं० १ से चकार का लोप, ६ से णकार। उक्त सूत्र से अनुस्वार। मागधी, अर्धमागधी में नं० २ + २५ से यकार। वयणं,

---

नोट—सर्वत्र। ५ शषोः सः। ३४ ष्म-पद्म-विस्मयेषु म्हः। २ + ३४ अन्त्यस्य हलो लोपः। १ क ग च ज ०।६ नो णः सर्वत्र। २ + २५ अवर्णो यः श्रुतिः।

धणं। वणं। कुलं। दहिं। महुं। अच्छिं। धणुं। सिरं। वासं। सप्पिं।

**अन्त्यस्य हलो लोपः। २। ३४।** प्रातिपदिकस्यान्त्यस्य हलो लोपः स्यात्। प्रातिपदिक-कार्याधिकारात् प्रातिपदिकस्यैव अन्त्यो हल गृह्यते। चम्मो। कम्मो। जसो। जाव। ताव। धणू। पाणी। घेणू। भाणू। वाऊ।

**सुभिसुप्सु दीर्घः। २। ३५।** एषु इदुतोर्दीर्घः स्यात्। अग्गी।

---

प्राकृत में वअणं। करणम्—उक्त सूत्र से अनुस्वार वरणं। रत्नम्, नं० २६ से तकार नकार का विप्रकर्ष। १ से तकार लोप। २+२५ से यकार। ६ से णकार। उक्त सूत्र से अनुस्वार, रयणं, धनम् का धणं। वनम्-का वणं। कुलम् का कुलं। दधि। नं० ६ से ध को ह। उक्त सूत्र से अनुस्वार। दहिं। एवम्। मधु का महुं। अक्षि। नं० १८ से क्ष को छकार। ४ से द्वित्व, ७ से चकार। उक्त से अनुस्वार। अच्छिं। धनुस् नं० २+३४ से स लोप। सु को अनुस्वार। धनुं। शिरः अन्त्य स का लोप। श को स। अनुस्वार। सिरं। वासः-वासं। सर्पिः। नं० ४ से रेफ लोप। २ से द्वित्व, अनुस्वार। सप्पिं।

अन्त्येति. प्रातिपदिक के अन्त्य हल् का लोप हो। प्रातिपदिक कार्य का प्रकरण है, अतः प्रातिपदिक के अन्त्य वर्ण का लोप होगा, चर्मन्—अन्त्य नकार का लोप, पूर्ववत रेफ लोप। द्वित्व। प्राकृतत्व से पुंलिङ्ग। चम्मो। कर्म का कम्मो। यशः का। नं० २० से जकार। ५ से श को स। ३१ से ओकार जसो। यावत् के यकार को जकार। अन्त्य लोप। जाव। एवम् तावत् का ताव। धनुस् के स लोप। णकारादेश। प्राकृतत्वात् पुंलिङ्ग। नं० २+३५ से दीर्घ। धणू। पाणिः का पाणी। धेनुः का धेणू। भानुः का भाणू। वायुः का वाऊ। सर्वत्र उक्त सूत्र से सुलोप।

सुभीति—सु-प्रथमा का एक वचन और भि तथा सुप् के परे इकार

---

२६ क्लिष्ट श्लिष्ट रत्न क्रिया शार्ङ्गेषु तत्स्वरवत् पूर्वस्य। ६ खघथधभां हः। १८ अक्ष्यादिषु छः। ५ शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ। ७ वर्गेषु युजः पूर्वः। २+३४ अन्त्यस्य हलः। ४। सर्वत्र लवराम्। २० आदेर्यो जः। ५ शषोः सः। ३१ अत ओत् सोः। २+३५ सुभिसुप्सु दीर्घः।

पंती। गिरी। हरी। पवी, छवी। वाऊ। तंतू। भाणू। अग्गीहिं।
पंतीहिं। वाऊहिं। तंतूहिं। अग्गीसु। पंतीसु। वाऊसु। तंतूसु।

क्त्वा तूण इयौ। २। ३६। क्त्वेति लुप्तषष्ठीकं पदम्,
सौत्रत्वान्न सन्धिः। क्त्वा प्रत्ययस्य तूण इय इत्यादेशौ स्तः। हंतूण।

---

उकार को दीर्घ हो। अग्निः—नं० २ से नकार का लोप। ४ से द्वित्व। २+३४ से स लोप। अग्गी। पङ्क्तिः-नं० ८ से क लोप। अनुस्वार से परे होने से तकार द्वित्व नहीं होगा। उक्त सूत्र से दीर्घ। पंती। गिरिः-का-गिरी। हरिः का हरी। पविः का पवी। छविः का छवी। वायुः—नं० १ से य लोप। स लोप। उक्त सूत्र से दीर्घ। वाऊ। तंतुः का तंतू। भानुः का भाणू। नं० ६ से णकार। प्रकृत सूत्र से दीर्घ। भाणू। भि के परे। अग्निभिः। न लोप, द्वित्व पूर्ववत् अग्गीहिं। पङ्क्तिभिः का पंतीहिं। वायुभः का वाऊहिं। तंतुभः का तंतूहिं। एवं सुप् के परे दीर्घ। अन्य कार्य पूर्ववत्। अग्निषु—अग्गीसु। पङ्क्तिषु-पंतीसु। वायुषु-वाऊसु। तन्तुषु-तंतूसु।

क्त्वेति। क्त्वा यह षष्ठ्यन्त पद है। सौत्रत्व से षष्ठी का लोप। एवम् तूण—इय इस में भी सन्धि सौत्रत्व से नहीं होगी। क्त्वा प्रत्यय को तूण इय आदेश हों। हन् क्त्वा। इस स्थिति में क्त्वा को तूण आदेश। नकार को अनुस्वार। हंतूण। अनुस्वार से तकार पर है अतः त लोप नहीं होगा। एवम् गम् क्त्वा। क्त्वा को तूण आदेश। गंतूण। कृ क्त्वा। तूण आदेश। नं० १ से त लोप। प्राकृतत्वात् आकार। काऊण। दा क्त्वा। दाऊण। श्रु क्त्वा। नं० ३ से रेफ लोप। ५ से श को स। गुण। क्त्वा को तूण आदेश। १ से त लोप। सोऊण। चलित्वा। चलिऊण। इयादेश के उदाहरण। भूत्वा, क्त्वा को इयादेश। गुणावादेश। भविय। भणित्वा-भणिय। चलित्वा-चलिय। प्रणम्य। प्रनम् क्त्वा। क्त्वा को इय आदेश। नं० ३ से रेफ लोप। ६ से णकार।

---

नोट—नं० २ अधो मनयाम्। २ शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ। २+३४ अन्त्यस्य हलो लोपः। ८ उपरि लोपः क ग ड त द प ष श साम्। १ क ग च ज त द प यवां प्रायो लोपः। ६ नो णः सर्वत्र। ४ सर्वत्र लवराम्। ५ शषोः सः।

गंतूण। तलोपे काऊण। दाऊण। सोऊण। चलिऊण। इत्यादि। इयादेशे—भविय। भणिय। चलिय। पणमिय।

इति श्री-महामहोपाध्याय-पं० मथुराप्रसाददीक्षितकृतौ
पाली-प्राकृत-प्रदीपे द्वितीयोऽध्यायः।

---

पणमिय। यह तूण और इय आदेश समास और असमास में क्त्वा की इच्छा के अनुकूल होते हैं। ये सूत्र पाली प्राकृत साधारण हैं। परंतु पाली में कहीं २ भेद है। जैसे प्राकृत में ज्ञ को णकार होता है। परंतु पाली में ज्ञ के जकार का लोप ञकार को द्वित्व होता है। जैसे-सर्वज्ञः का प्राकृत में सव्वण्णो ( ण्णू ) परंतु पाली में सव्वञ्ञो। इत्यादि भेद है। कुछ वर्ण ऐसे हैं। जो पालीप्राकृत में समान रूप से हैं। जैसे—

ऐ औ स्फ स्य ऋ ॠ ऌ ॡ प्लुत श षा विन्दुश्चतुर्थी क्वचित्
प्रान्ते हल् ङ ञ नाः पृथग् द्विवचनं नाष्टादश प्राकृते।
रूपं चापि यदात्मनेपदकृतं यद्वा परस्मैपदं
भेदो नैव तयोश्च लिङ्गनियमस्तादृग् यथा संस्कृते। १।

ये ऐ औ इत्यादिक पाली प्राकृत में समान रूप से हैं। जैसे ये प्राकृत में अठारह ऐ औ इत्यादिक नहीं होते हैं एवं पाली मागधी शौरसेनी पैशाची इत्यादि में भी नहीं होते हैं।

## शौरसेनी—

शूरसेन देशोद्भव भाषा को शौरसेनी कहते हैं। इसके उद्गम का मूल संस्कृत ही है। प्राकृत और इस शौरसेनी में बहुत ही थोड़ा भेद है। प्राकृत में प्रथमा सुभक्ति के प्रयोग में ओकार होता है। जैसे देवो हरो माणुसो इत्यादि। शौरसेनी में एकार। देवे हरे, माणुशे। दूसरा भेद यह है कि सकार को शकार होता है। प्रथम द्वितीय को तृतीय चतुर्थ आदेश होता है सूत्र नं० ३२ से हमने कह दिया है।

## पैशाची—

प्रकृतिः शौरसेनी । पैशाची भाषा की प्रकृति शौरसेनी है । इस में वर्ग के अनादिस्थ तृतीय चतुर्थ वर्ण को प्रथम द्वितीय वर्ण होते हैं । जैसे गगनं का गकनं । राजा-राचा । निर्झरः-णिच्छरो । वडिशम्-वटिशं । दशवदनः-दशवतणो इत्यादि । सकार को शकार रेफ को लकार पैशाची में अधिक होता है । जैसे— अरे रे रुद्रोऽस्ति का अले ले लुद्दोत्थि इत्यादि ।

## मागधी—

मागधी, शौरसेनी और प्राकृत के समान ही है । प्रायः ह्रस्व अकार के स्थान पर यकारादेश मगधदेशीय आर्हत ग्रन्थों में अधिक रूप से हैं । उदाहरण जैनागमों के आगे दिखावेंगे उससे जानना चाहिए ।

लोक व्यवहारे तु संयुक्तलोपे पूर्वस्य दीर्घो वाच्यः । लोक में प्राकृत शब्द के संयुक्त वर्णो के पूर्व वर्ण का लोप करने पर संयुक्त से पूर्व स्वर का दीर्घ करने से प्रचलित हिन्दी शब्द सिद्ध हो जाते हैं जैसे—नच्च—नाच । कम्म-काम । धम्म-धाम । चम्म-चाम । पुत्त-पूत । सुत्त-सूत । दुक्खु-दूख । रिच्छ-रीछ । कज्ज-काज । पिट्ठ-पीठ । इत्यादि ।

इति श्री म० म० मथुराप्रसाददीक्षितकृते पाली—
प्राकृतप्रदीपे द्वितीयोऽध्यायः

---

## अथ नाटकोक्तानि उदाहरणानि एभिरेवसूत्रैर्निष्पाद्य दर्श्यन्ते ।

अस्मत्कृते भक्तसुदर्शन-नाटके—

पुरिसुत्तम—सुगहीओ विविहविबुहसेविआ—अरणो । भारहरज्जाहिवई, सुदंसणो सव्वदा जयउ ।

पुरुषोत्तम—नं० २+२६ से उ को इकार । ५ से ष को सकार । पुरुष-उत्तम । नं० ११ से षकाराकार का लोप । (पुरिसुत्तम) सुगृहीतः। १२ से ऋकार को अकार । नं० १ से तकार का लोप । २+३१ से ओकार ।

र्( सुगहीओ ) विविध बुवुध । नं० ६ से धकार को हकार । ( विविह विबुह ) सेवितचरणः । नं० १ से तकार एवं चकार का लोप । नं० २ + ३१ से ओकार । ( सेविआअरणो ) भारतराज्याधिपतिः । नं० २ + २६ से तकार को हकार । नं० २ से यकार का लोप । ४ से जकार द्वित्व । १० से आकार को अकार । नं० ६ से धकार को हकार । १ से तकार लोप । नं० २ + ३५ से दीर्घ ( भारहरज्जाहिवई ) सुदर्शनः । नं० ३ से रेफ लोप । २+२१ से अनुस्वार नं० ५ से श को स । ८ से न को णकार । २ + ३१ से ओकार । ( सुदंसणो सर्वदा । नं० ३ से रेफ लोप । ४ से वकार द्वित्व । ( सव्वदा ) जयतु । नं० १ तलोप । जयउ । इति— प्रथम अङ्क ।

पुनस्तत्रैव—अवेशकः—

प्रियंवदा—अज्जेव्व ससिकलाए सअंवरो त्थि सा पडिक्खणं कुदो रोइदि अद्यैव—नं० १७ से 'द्य' को जकार । ४ से द्वित्व । ११ में बहुल ग्रहण से ए के एकार का लोप । नीडादित्व मे वकार को द्वित्व । नं० २ + ७ मे ऐकार व एकार । ( अज्जेव्व ) शशिकलायाः । नं० ५ से दोनो शकारों को सकार आकारान्त षष्ठी विभक्ति को एकार । विभक्तियों के अनुगम हो जाने मे आदेश सूत्र नहीं कहे हैं । ( ससिकलाए ) स्वयंवरो । नं० ३ से वलोप । १ मे य लोप नं० २ + ३१ से सु को ओकार । (सअंवरो) कोई आचार्य नं० ११ में बहुल ग्रहण व को उकार "सुअंवरो" मानते हैं । अस्ति । नं० ११ मे अकार लोप । २ + १ मे स्त को थकार । ४ से थकार द्वित्व । ७ से प्रथम थकार को तकार । ( त्थि प्रतिक्षणम् । नं० ३ से रेफ लोप । २ + २७ से त को ड आदेश । नं० १६

नोट— २+२८ ईत्पुरिषे रोः । ५ शषोः सः । ११ सन्धौ अज्लोप विशेष बहुलम् । १२ ऋ तोऽत् । १ क ग च ज त द प य वां प्रायो लोपः । २ + २८ अत ओत सोः । ६ खघथधभां हः । २ + २६ वसति भरतयोर्हः । अषो मनयाम् २ शेषादेशयोर्द्वित्वमनादौ । १० अदातो यथादिषु वा । २ + ३५ सुभिसुप्सुदीर्घः ३ सर्वत्र लवराम् । २ + २२ वक्रादिषु । १७ त्य थ्य द्यां च छ जाः । २ + ७ ऐत एत् । २ + १३ स्तस्य थः । ७ वर्गेषु युजः पूर्वः । १६ ष्क स्क क्षां खः । ३ अनादावयुजोस्तथौ । २ + २७ प्रतिसर वे तसपताकासुडः ।

क्ष को खकार। ४ से द्वित्व। ७ से ककार। ( पडिक्खणं ) कुतः। नं० १ X ३२ से 'त' को 'द'। ११ से विसर्ग को ओकार ( कुदो ) रोदिति। नं० १ से दलोप ३२ से तकार को दकार। शौरसेनी में यह दकारादेश जानना।

सुलो० सहि! ताए सिविणे सुदंसणो वरिओ, अओ सा सुअंवरं णाहिलसइ। सखि! नं० ६ से 'ख' को 'ह'। सहि। तया-ताए। स्वप्ने। नं० ३ से वलोप। ३१ से। अकार को इकार। २७ से पकार और नकार का विप्रकर्ष अकार को इकार। ६ से नकार को णकार। १५ से पकार को वकार। सिविणे। सुदर्शनः- सुदंसणः पूर्ववाक्य में साधुत्व कहा गया है। वृतः। प्राकृतत्वात् इट् गुण। नं० १ से तकार लोप। २+३१ से ओकार। वरिओ। अतः। १ से त लोप। ११ से ओकार। अओ। स्वयंवरं। नं० ३ से वलोप। १ से य लोप। सअंवरं। नाभिलषति। नं० ६ से नकार को णकार। ६ से भ को 'ह'। ५ से षकार को सकार। १ से त लोप। णाहिलसइ।

भ्रियं तत्थ गंतूण सुदंसणं चेय वरउ को दोसो।

तत्र। सप्तमी में स्सि, म्मि, त्थ, तीनों आदेश होते हैं। त्थ आदेश। तत्थ। गत्वा। नं० २ + ३६ से क्त्वा को तूण आदेश। मकार को अनुस्वार। गंतूण। सुदंसणं। साधुत्व प्रथम कर आये। सुदर्शनम्। एव। एव के स्थान में चेव यह अव्यय है। वृणोतु। 'वरतु' प्राकृत में सवी प्रायः भ्वादिवत् होती हैं। नं० १ से तलोप। वरउ। कः। नं० २४ से स लोप। ३१ से ओकार। 'को'। दोषः। नं० ५ से ष को सकार। ओकार पूर्ववत्। दोसो।

सुलो० सा कहेइ। एगदा वरिज्जइ पती। ( दी ) पुणो २ वरणाहिलासा णव्व करिज्जइ। अविअ वरणत्थं अएणं पुरिसं णेइ

कथयति। नं० ६ से थकार को हकार। १ से त लोप। कहेइ। एकदा। नं० ३२ से ककार को गकार। एगदा। 'वरिज्जइ' भाव और कर्म में यक् विकरण के विषय में ज्ज होता है, जैसे—करिज्जइ; गमिज्जइ, भविज्जइ इत्यादि। नं० १ से त लोप। व्रियते—वरिज्जइ। पतिः। नं० २+३४ से स् लोप। २+३५ से दीर्घ। पती। (दी) पुनः २। नं० ६ से णकार। ११ से ओकार। पुणो २। राजकुमारीभिः। नं०१ से जकार का लोप। २+२५ से यकार। भस् को हिं। रायकुमारीहिं। वरणाभिलाषा। नं० ६ से भ को ह। ५ से ष को स। वरणाहिलासा। नैव। नं० ६ से णकार। १+११ से एकार। नं० २+२३ से व को द्वित्व। णेव्व। क्रियते। करिज्जइ। अपि च। नं० १५ से पकार को वकार। १ से च लोप। अविअ। वरणाथ। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ७ से थ को स। २+३० से आकार को अकार। वरणत्थं। अन्यं। पूर्ववत् य लोप। द्वित्व। ६ से नकारको णकार। अण्णं। पुरुषं। नं० २+२६ से उकार को इकार। ५ से 'ष' को 'स'। पुरिसं। नैव। १+११ से एकार। २+२३ से व को द्वित्व। ६ से णकार। णेव्व। द्रक्ष्यामि। दंसइस्से। २।२१ से अनुस्वार। ५ से श को स। प्राकृतत्वाद् इडागम। और आत्मनेपद। य लोप द्वित्व पूर्ववत्।

प्रियं० तदा रएणा कुदो आग्गहो करिज्जइ।

सुलो० सो सुदंसणं णाहिलसइ। कहेइ कंपि रज्जाहिवइं रायकुमारं वरसु।

प्रियं० कुतः। नं० ३२ से तकार को दकार। नं० ११ से ओकार। कुदो। आग्रहः। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ३१ से ओकार। आग्गहो। करिज्जइ क्रियते। पूर्ववत्।

सुलो० सः। नं० ३१ से ओकार। सो। सुदर्शनम्। नं० ३ से रेफ लोप। ५ से शकार को सकार। ६ से नकार को णकार। २+२१ से अनुस्वार।

---

(२+२५) अवर्णो यः श्रुतिः। १+११ सन्धौ अज०। (२+२३) नीडादिषु द्वित्वम्। (१५) पो वः। शौरसेनी में ३२ से अनदावयुजोस्तथयोर्दधौ से दकार। अथवा (३२) प्रथमद्वितीययोः से दकार होगा।

(३) सर्वत्र लवराम्। (५) शेषादेशयोर्द्वित्वम नादौ (७) वर्गेषु युजः पूर्वः। (१०) अदातो यथादिषु वा (६) नो णः सर्वत्र (२+२६)

सुदंसणं । नाभिलषति । पूर्ववत् णकार । ६ से हकार । ५ से सकार । नं० १ से तकार का लोप । णाहिलसइ । कथयति । नं० ६ से थकार को हकार । एयन्त में शप् अयादिक नहीं होते हैं किंतु अ इ मिलकर एकार हो जायगा । नं० १ से तलोप । कहइ । कमपि । नं० ११ से अकार लोप । कं पि । राज्याधिपतिम् । नं० २ से यलोप । ५ से द्वित्व । १० से रेफोत्तर आकार को अकार । अथवा २ + ३० से अकारादेश । ६ से धकार को हकार । १५ से पकार को वकार । १ से तलोप । रज्जाहिवइं । राजकुमारं । नं० १ से जकार का लोप । २५ से अकार को यकार । रायकुमारं । वृणु । ऋकारान्त या सवी धातुओं से शप् गुण होता है । वरसु ।

प्रियं० सुदंसणो वि रायकुमारोऽत्थि । सुदर्शनोऽपि राजकुमारोऽस्ति । सव का साधुत्व पूर्ववत् जानना । नं० २ + १३ से स्त को थकार । ४ से द्वित्व । ७ से थ को त । स्ति—का इस प्रकार त्थि होगा । नं० ११ से अल्लोप ।

सुलो० सुदंसणो रायकुमारो त्थि, परं सो रज्जाहिवई णत्थि । सुदर्शनः राजकुमारोऽस्ति परं स राज्याधिपतिर्नास्ति । पूर्वोक्त वाक्यों में प्राप्त सवी पदों का साधुत्व दिखा आये हैं । पति शब्द की इकार को नं० २ + ३५ से दीर्घ होगा ।

अभिज्ञान-शाकुन्तले—प्रस्तावनायाम् ।

नटी—सुविहिद पओअदाए । सुविहित प्रयोगतया । नं० ३२ से तकार को दकार । नं० २ से रेफ का लोप । ४ से पकार द्वित्व । १ से गकार और गकार का लोप । ३२ से त को द । तृतीया के एक वचन को आकारान्त स्त्रीलिङ्ग में एकार होता है । सुविहिद पओअदाए । अज्जस्स । आर्यस्य । नं० २१ से र्य

---

इत्पुरुषे रोः । ( ५ ) शषोः सः ( २ + ७ ) ऐत एत् । ( ११ ) सन्धौ अज लोपविशेषा बहुलम् ( २ + २१ ) वक्रादिषुबिन्दुः व ( २४ ) ऋत्वादिषु तो दः । अथवा । (२ + ३०) अनादावयुजोस्तथयोर्दधौ २ + ३१ अत ओत् सोः । (६) खघथधभां हः । ( १ ) क ग च ज त द प य वां प्रायो लोपः । (२) अधो मनयाम् । (१५) पो वः । ( २ + ५ ) अवर्णो यः श्रुतिः । ( २ + १३ ) स्तस्य थः । (२ + ३५) सुभिसुप्सु दीर्घः । ( ३२ ) प्रथमद्वितीययोस्तृतीयचतुर्थौ । ( २१ ) र्यं शय्याभिमन्युषु जः ।

को जकार। ४ से द्वित्व। १० से या० २+३० से आकार को ह्रस्व। नं० २ से यकार लोप। ४ से द्वित्व। अन्जस्स। अथवा अ इ उ ऋकारान्त सवी शब्दों में ङस् को स्स होता है। ण किं पि। किमपि। नं ११ से अकार लोप। ६ से णकार। परिहाइस्सइ। परिहास्यते। प्राकृत में अनिट् सेट् सव कवि की इच्छा-नुकूल होती हैं, इनका कोई नियम नहीं है। एवम्, आत्मनेपद परस्मैपद भी कवि की इच्छानुकूल होता है, परिहास्यति। न० २ से यलोप। ४ से द्वित्व। १ से तलोप। प्राकृतत्वाद् इडागम। परिहाइस्सइ।

नटो—अज्ज! एव्वं णेदं। अर्य्य? एवं न्वेतद्। नं० २१ से र्य को जकार ४ से द्वित्व। २+३० से ह्रस्व अकार। अज्ज। एवं २+२३ से द्वित्व। एव्वं। न्वेतद। नं० ३ से वलोप। ६ से णकार। ३२ से तकार को दकार २+३४ से त् का लोप। २+३३ से अनुस्वार। एव्वं णेदं। अणंतर-करणिज्जं। अनन्तर करणीयम्। नं० ६ से णकार, २+१६ से आनीय प्रत्यय को 'ज्ज' आदेश। २+३१ से ईकार को इकार। अणंतर करणिज्जं। अज्जो। पूर्ववत्। आणवेदु। आज्ञापयतु। ३३ से ज्ञा को 'ण' आदेश। १५ से पकार को वकार। णयन्त में प्राकृतत्वात् शप् अय् न होने से आणवेतु हुआ। ३२ से तकार को दकार। आणवेदु।

पुनः—अध कदमं उण उदुं अधिकरिय गाइस्सं। अथ कतमं पुनः ऋतुम् अधिकृत्य गास्यामि। अथ। नं० ३२ से धकार। यह सूत्र शौरसेनी प्राकृत में लगता है। आधुनिक समय में इन आदेशों के करने से प्राकृत नितान्त दुरूह हो जाता है। अतः स्त्री वा नीचादिपात्रों में प्राकृत अथवा मागधी या अर्धमागधी का नाटकादि में प्रयोग करना चाहिये। कतमं, ३२ से 'त' को दकार। कदमं। पुनः। नं० १ से प लोप। ६ से णकार। ११ से विसर्ग लोप। उण। ऋतुं। नं० १४ से उकार। ३२ से तकार को दकार, उदुं। अधिकृत्य, नं० २+३६ से क्त्वा को इय आदेश। अधिकरिय। गास्यामि। नं० ३ से य लोप। ४ से द्वित्व। इडागम। गाइस्सं।

पुनः—तह। तथा। यहां थकार को ३२ से धकार नहीं किया, किन्तु नं० ८ से हकार होगा। १० से ह्रस्व। तह। सर्वत्र साधुत्व में दर्शित अङ्कों के अनुकूल सूत्र देख लें।

पुनः—ईसीसि चुंविआइं, भमरेहि सुउमार-केसरसिहाइं।
ओदंसयंति दअमाणा, पमदाओ सिरीसकुसुमाइं। ४।

ईषद् ईषद्। नं० ५ से ष को सकारादेश। ३१ से षकाराकार को इकार। २+३४ से दोनों दकारों का लोप। ईसि-ईसि। नं० ११ से दीर्घ। ईसीसि। चुंवितानि। नं० १ से तकार का लोप। चुंविआइं। भ्रमरैः। तृतीया में भिस् को हिं आदेश होगा। ३ से रेफ लोप। भमरेहि। केशरशिखानि। नं० ५ से श को स। ६ से ख को हकार। केसरसिहाइं। अवतंसयन्ति। नं० ३२ से तकार क दकार। नं० ११ से व को उकार गुण। एवं अव का ओकार होगा। ओदंसयन्ति। दयमानाः। नं० १ से यलोप। ६ से णकार। २+३४ से सकार लोप। दअमाणा। प्रमदाः। नं० ३ से रेफ लोप। पमदाओ। शिरीषकुसुमानि। नं० ५ से शकार षकार को सकार। जस् को नपुंसक लिङ्ग में इंकार। सिरीसकुसुमाइं। ४।

पुनस्तत्रैव, णं अज्जमिस्सेहि पढमं एव्व आणत्तं, अहिण्णाण साउंदलं णाम अउव्वं णाडअं अहिणीअदु त्ति।

ननु—णं। निपातन से, अथवा बहुल ग्रहण से ननु को 'णम्' आदेश। आर्यमिश्रैः नं-२१ से र्य को ज आदेश। ४ से द्वित्व। २×३० से आकार को अकार। ३ से रेफ लोप। ४ से सकार द्वित्व। तृतीया मे भिस् को हिं आदेश। अज्जमिस्सेहिं। प्रथमं। ४ से रेफ लोप, थकार को ढ। पढमं। एव। नं० २×२३ से वकार द्वित्व। एव्व। आज्ञतम्। नं० २३ से ज्ञ को णकार। दीर्घ, आकार से णकार पर है, अतः द्वित्व नहीं होगा। नं० ८ से पकार लोप। ४ से 'त' द्वित्वम्। आणत्तं। अभिज्ञानशाकुन्तलम्, नं० ६ से भकार को हकार। २३ से ज्ञ को णकार। ४ से द्वित्व। ६ से नकार को णकार। ५ से श को स। १ से क लोप। ३२ से त को द। अहिण्णाणसाउन्दलं। नाम। ६ से नकार को णकार। णाम। अपूर्वम्। १ से प लोप। ३ से रेफ लोप ४ से द्वित्व। २×३१ से ऊकार को उकार। अउव्वं। नाटकम्। नं० ६ से न को ण। १६ से टकार को ड। १ से क लोप। णाडअं। अभिनीयताम्। नं० ६ से भ को हकार। ६ से णकार। १ य लोप। प्राकृतत्वात् परस्मैपद। अहिणीअद। ३२ से तकार को दकार। अहिणीअदुत्ति। २×२८ से तकार। इदो-इदो पिअसहीओ।

## पुनस्तत्रैव—प्रथमेऽङ्के ।

इतः इतः । प्रियसख्यौ । नं० ३२ से तकार को दकार । ११ से विसर्ग को ओकार । इदो इदो । नं० ३ से रेफ लोप । १ से य लोप । ६ से ख को हकार । प्राकृत में द्विवचन नहीं होता है । अतः जस् को ओकार । पिअसहीओ ।

एका—हला सउं (त) दले तुवत्तो वि तादकण्णस्स आस्समरुक्खआ पिअदर त्ति तक्केमि । हला, 'हण्डे हञ्जे हलाऽऽह्वाने नीचां चेटीं सखीं प्रति' । एवम्—सखी के सम्मुखीकरणार्थ संबोधन मे हला का प्रयोग होता है । शकुन्तले । नं० ५ से श को सकार । १ से क लोप । ३२ से त को द । सउन्दले । त्वत्तोऽपि २८ से तकार वकार का विप्रकर्ष । तकार के साथ उकारागम । तात्पर्य यह है, कि—यकार के साथ विप्रकर्ष करने पर पूर्ववर्ण के साथ इकार का, और वकार के साथ विप्रकर्ष करने पर पूर्ववर्ण के साथ उकार का योग हो जाता है, अतः नं० २८ से विप्रकर्ष करने पर उकार का योग होगा । ११ से अपि के अकार का लोप । १५ से पकार को वकार । तुवत्तोवि । तातकण्वस्य । नं० ३२ से तकार को दकार । ३ से व लोप । ४ से णकार द्वित्व । २ से य लोप । ४ से सकार द्वित्व । तादकण्णस्स आश्रमवृक्षाः । नं० १६ से क्ष को ख आदेश । ४ द्वित्व । ७ से प्रथम ख को ककार । १ से ककार का लोप 'वृक्षे वेनरुर्वा' वृ को रु । रुक्खआ । प्रियतराः । नं० ३ से रेफ लोप । १ से य लोप । ३२ से तकार को दकार । पिअदर त्ति । इति का २ + २८ से त्ति होता, संयुक्त परे रहने से नं० २ + ३० से ह्रस्व अकार होगा । पिअदरत्ति । तर्कयामि । नं० ३ से रेफ लोप । ४ से द्वित्व । ण्यन्त मे शप् अयादेश नहीं होगा । अतः तक्केमि हुआ ।

जेण णोमालिआ-कुसुमपरिपेलवावि तुमं एदाणं आलवालपरिऊरणे णिउत्ता । येन । २० से यकार को जकार । ६ से णकार । जेण । नवमालिका-कुसुमपरिपेलवाऽपि । नं० ६ से नकार को णकार । नं० ११ से नवमालिका के अकार वकार को ओकार । १ से क लोप । १५ से पकार को वकार । णव-मालिआकुसुमपरिपेलवावि । सखियों की परस्पर उक्ति मे पेलव शब्द व्रीडा व्यञ्जक अश्लील होते हुये भी दोषरहित ही है । त्वम् । तुमं । एतेषाम् । नं० ३२ से दकार षष्ठी मे आम् को णं । एदाणं । आलवालपरिपूरणे । नं० १ से

पकार लोप। आलवालपरिकरणे। नियुक्ता। नं० ६ से णकार। १ से य लोप। ८ से क लोप। ४ से तकार को द्वित्व। णिउत्ता।

पुनस्तत्रैव—हला अणसूए ण केवलं तादस्स णिओओ, मम वि एदेसुं सहोअर सिणेहो। हला अनसूये। नं० ६ से न को ण। १ से य लोप। अणसूए। न केवलं तातस्य। नं० ६ से णकार। ३२ से दकार। २ से य लोप। ४ से द्वित्व। ण केवलं तातस्य। णिओओ। पूर्ववत् णकार, और यकार गकार का लोप। ममापि एतेषु। नं० ११ से अपि के अकार का लोप। १५ से पकार को व आदेश। नं० ३२ से त को द। ५ से ष को स। प्राकृतत्वात् अनुस्वार। मम वि एदेसुं। सहोदरस्नेहः। नं० १ से द लोप। २८ से विप्रकर्ष। स्निह धातु के इकार से तत्स्वरयुक्तता। अर्थात् स के साथ इकार युक्तता। नं० ६ से णकार। सहोअरसिणेहो। प्रथमा विभक्ति मे सर्वत्र नं० ३१ से ओकार होता है, अतः उसके साधुत्व को बार २ नहीं दिया।

पुनस्तत्रैव—द्वितीया—सहि सउंदले उदअलम्भिदा एदे गिम्हआल-कुसुमदाइणो अस्समरुक्खआ दाणिं अदिक्कंतकुसुमसमए वि रुक्खगे सिज्झम्ह तेण अणहिसंधिगुरुओ धम्मो भविस्सदि।

सखि शकुन्तले। नं० ६ से हकार। ६ से सकार। १ से क लोप। ३२ से त को द आदेश। सहि सउन्दले। उदकलम्भिता। १ पूर्ववत् क लोप। दकारादेश। उदअलम्भिदा। एते ग्रीष्मकालकुसुमदायिनः। ३२ से दकार। ३ से रेफ लोप। नं० २ + ३० से इकार। ३४ से ष्म को म्ह। १ से ककार-यकार का लोप ६ से नकार को णकार। एदे गिम्हआलकुसुमदाइणो। आश्रमवृक्षाः। ३ से रेफ लोप। ५ से सकार। ४ से द्वित्व। १० से ह्रस्व वृ को रु। १६ से ख। ४ से द्वित्व। ७ से प्रथम ख को ककार। जस् को दीर्घ। अस्समरुक्खआ। इदानीम्। ११ से इकार लोप। ६ से णकार। नं० २ + ३ से ईकार को इकार। दाणिं। अतिक्रान्तकुसुमसमयेऽपि। ३२ से त को द आदेश। ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व ४ + ३० से अकार। १ से य लोप। १५ से वकार।। अदिक्कन्तकुसुम-समए वि। वृक्षकान्। पूर्ववत् साधुत्व। ३२ से ककार को गकार। रुक्खगे। सिञ्चामः। सिञ्चम्ह। तेन अनभिसन्धिगुरुको। ६ से न को णकार। ६ से

दकार। १ से क लोप। तेण अणहिसंधिगुरुओ। धर्मः भविष्यति। ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। २ से य लोप। ५ से सकार। ४ से द्वित्व। १ से तलोप। धम्मो भविस्सइ।

पुनस्तत्रैव-चतुर्थेऽङ्के १२ श्लोकादनन्तरम्—

गौतमी—जादे णादिजणसिणिद्धाहिं अणुण्णादगमणाऽसि तवोवणदेवदाहिं ता पणम भअवदी णं।

जाते। नं० ३२ से त को द। जादे। ज्ञातिजनस्निग्धाभिः। ३३ से ज्ञ को णकार। द्वित्व अशुद्ध है, क्यों कि आदिस्थ होने से द्वित्व नहीं होगा। ३२ से त को द। २८ से स्नि का विप्रकर्ष और तत्स्वरता पूर्व में होने से सिनिग्ध। ६ से दोनों नकारों को णकार। नं० ८ से गकार लोप। ४ से द्वित्व। ७ से घ को दकार। भिस् को प्राकृत में हिं होता है। एवं णादि जणसिणिद्धाहिं। अनुज्ञातगमनासि। पूर्ववत्। ३३ से ण। ४ से द्वित्व। ३२ से दकार। ६ से दोनों नकारों को णकार। अणुण्णादगमणासि। तपोवनदेवताभिः। नं० १५ से वकार। ६+से णकार। ३२ से दकार। तवोवणदेवदाहिं। तत् प्रणम, भगवती ननु। नं० २+३४ से तकार का लोप। ११ से आकार। ता। नं० ३ से रेफ लोप। १ से गकार लोप। ३२ द। ननु अव्यय के स्थान मे णं का प्रयोग प्राकृत में करते हैं, जैसे—"ते णं कालेणं तेणं समए णं" इत्यादि। ता पणम भअदीणं

शकुं० हला पिअंवदे। अज्ज उत्तदंसणोस्सुआए वि अस्समपदं परिच्चअन्तीए दुक्खदुक्खेण चलणा मे पुरोमुहा ण णिवडन्ति।

हला—प्रियंवदे। नं० ३ से रेफ लोप। १ से य लोप। पिअंवदे। आर्यपुत्रदर्शनोत्सुकाया अपि। नं० २१ से र्य को जकार। ४ से द्वित्व। २+३० से आकार को अकार। १ से प लोप। ३ से रेफ लोप। ४ से त द्वित्व। ३ से र्श के ऊर्ध्वस्थ रेफ का लोप। २+२१ अनुस्वार। ५ से सकार। ६ से णकार। ८ से त्सु के तकार का लोप। ४ से द्वित्व। १ से क लोप। ११ से अपि के अकार का लोप। १५ से प को व। अज्जउत्तदंसणोस्सुआए वि। आश्रमपदं परित्यजन्त्याः। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। २+३० से अकार। १७ से चकार। २ से द्वित्व। १ से ज लोप। अस्सपदं परिच्चअन्तीए। दुःखदुःखेन

नं० ११ से विसर्ग लोप । २ से ख द्वित्व । ७ से ककार । ६ से णकार । दुक्ख-दुक्खेण । चरणौ मे पुरोमुखौ न निपततः । नं० २५ से रेफ को लकार । प्राकृत में द्विवचन नहीं होता है, किंतु बहुवचन ही द्विवचन के स्थान में भी होता है । ६ से ख को हकार । ६ से नकारों को णकार । १५ से पकार को वकार । चलणा मे पुरोमुहाणं ण णिवडन्ति ।

प्रियं० ण केवलं तुमं ज्जेव्व तवोवणविरहकादरा तुए उवत्थिदविओअस्स तवोवणस्स वि अवत्थं पेक्ख दाव ।

न केवलं त्वम् एव । नं० ६ मे णकार । त्वम् को तुमं, एव अन्यय के स्थान मे ज्जेव्व । निपात अन्यय होता है । ण केवलं तुमं ज्जेव्व । तपोवनविरहकातरा । नं० १५ से वकार । ६ से णकार । ३२ से त को द । तवोवणविरहकादरा । त्वया उपस्थितवियोगस्य तपोवनस्यापि । त्वया के स्थान मे तुए । नं० १५ से य को व । ८ से स लोप । ४ से द्वित्व । ७ से प्रथम थ को तकार । ३२ से दकार । १ से यकार गकार का लोप । उवत्थिद विओअस्स "तवोवणस्सवि" । इसका साधुत्व पूर्ववत् जानना । स्य के यकार का नं० २ से य लोप । ४ से द्वित्व । अवस्थां प्रेक्षस्व तावत् । नं० ८ से स लोप । ४ से द्वित्व । ७ से तकार । प्राकृतत्वात् ह्रस्व नं० ३ से रेफ लोप । १६ से क्ष को खकार । ४ से द्वित्व । ७ से ककार । प्राकृतत्वात् परस्मैपद । नं० ३२ से त को द । नं० २ + ३४ से अन्त्य दकार का लोप । अवत्थं पेक्ख दाव ।

उग्गिएण दब्भकवला, मिई परिच्चत्तणच्चणा मोरा ।
ओसरिअ पोण्डुपत्ता, मुअन्ति अंसु विअ लदाओ । ( १४ )

उद्गीर्णदर्भकवला, नं० ८ से द् लोप । ४ से ग द्वित्व । २ + ३० से ईकार को इकार । ३ से रेफ लोप । ४ से द्वित्व, दर्भ मे भी ३ से रेफ लोप, ४ से म द्वित्व । ७ से वकार, उग्गिएणदब्भकवला । मृगी । नं० १३ से इकार । १ से ग लोप । मिई । वास्तविक प्रयोग को न समझकर जो 'मई' पाठ मानते हैं वह अयुक्त है । नं० १२ से अकार करने पर यद्यपि मई हो सकता है, परंतु 'मिरगा' यही लोक मे प्रयोग होता है, न कि 'मरगा' यह । इससे सिद्ध है, कि इकार ही युक्त है ।

परित्यक्तनर्तना । नं० १७ से त्य को चकार । ४ से द्वित्व, नं० ८ से क लोप ४ से त द्वित्व । ६ से दोनो नकारों को णकार । ३ से रेफ लोप , ७ से त द्वित्व । परिच्चत्तणत्तणा । मयूराः, नं० १ से य लोप । ११ से वैकल्पिक गुण करने से । मोरा (१) 'मोरी' यह शकुन्तला नाटक का पाठ अप्रामाणिक है, क्योंकि मयूरी कभी भी नहीं नाचती है ।

अपसृत । नं० ११ से अप उपसर्ग को ओकार सृ धातु से इट् गुण प्राकृत में सभी सेट् है । नं० १ से त लोप । ओसरिअ । पाण्डुपत्रा । नं० ३ से रेफ लोप । ४ से द्वित्व, पाण्डुपत्ता । नं० २+३० से ह्रस्व होने से पण्डुपत्ता पाठ युक्त है, "मुञ्चन्ति अश्रु इव लताः" प्राकृतत्वात् नुम् का अभाव । नं० १ से च लोप, नं० ३ से रेफ लोप । नं० २ + २१ से अकार के साथ अनुस्वार । अनुस्वार से परे होने से सकार को द्वित्व नहीं होगा । २ + ३३ से अनुस्वारागम । विअ, इवार्थक अव्यय है । ३२ से तकार को दकार । "मुअन्ति अंसु विअ लदाओ" (१४)

'अस्सुं' द्वित्व सकारात्मक प्रयोग अशुद्ध है, लोक में आँसु प्रसिद्ध है ।

शकुं०—ताद ! लदावहिणीं दाव माहवीं आमंतइस्सं ।

तात ! लताभगिनीं तावत् माधवीम् आमन्त्रयिष्ये । नं० ३२ से तकार को दकार । वाद ! लदा भगिनी शब्द के भ को प्राकृतत्वात् वकार । और ग को हकार । नं० ६ से णकार । लदा वहिणि । तावत् माधवीम् ३२ से त को द । २ + २६ से हल् तकार का लोप । दाव । ६ से ध को ह । १ से य लोप । दाव माहवीं आमंतइस्सं । रेफ यकार लोप, द्वित्व पूर्ववत् जानना ।

शकुं०—लदा वहिणि ! पच्चालिङ्गस्स मं, साहामएहिं वाहूहिं ।

लताभगिनि । पूर्ववत्साधुत्व । लदावहिणि ! प्रत्यालिङ्ग(स्व) नं० १७ से त्य को चकार, ४ से द्वित्व । ३ से रेफ लोप । नं० २ से य लोप । ४ से द्वित्व । पच्चालिङ्गस्स । मां को ह्रस्व । मं । शाखामयैः बाहुभिः, ५ से श को स । ६ से ख को ह । १ से य लोप । भिस् को हिं । नं० ३५ से उकार को दीर्घ, साहामएहिं बाहूहिं ।

---

नोट (१) उक्त प्रक्रिया से मोरो, मऊरो सिद्ध है, मयूर सूत्र चिन्त्यप्रयोजन है ।

पुनः शकुन्तला—अज्ज पहुदि दूरवत्तिणी क्खु दे भविस्सं, ताद अहं विय इयं तुए चिन्तणीया। अद्य प्रभृति दूरवर्तिनी। नं० १७ से द्य को जकार। ४ से द्वित्व। ३ से रेफ लोप। ६ से हकार। १४ से ऋ को उकार। ३२ से दकार। ३ से 'र्ति' गत रेफ का लोप। ४ से द्वित्व। ६ से णकार। अज्ज पहुदि दूरवत्तिणी। खलु ते भविष्यामि, खलु का क्खु अव्यय प्रयुक्त होता है। ३२ से त को द। नं० २ से य लोप। ४ से द्वित्व। सर्वत्र मिप् के स्थान मे अम् का प्रयोग होता है, क्खु दे भविस्सं। तात अहम् इव। नं० ३२ से दकार। इव के स्थान मे विय अव्यय का प्रयोग होता है। ताद अहं विय। इयं त्वया चिन्तनीया। नं० ६ से नकार को णकार। नं० २+१६ से अनीय प्रत्यय को ज्ज आदेश होने से चिन्तेज्जा होता है परं तु 'ज्ज' आदेश को वैकल्पिक मानकर ज्जादेश नहीं किया। चिन्तणीया, वस्तुतः चिन्तेज्जा अथवा चिन्तणिज्जा पाठ शुद्ध है।

शकु०—( सख्यौ उपेत्य ) हला ऐसा दोण्णं वि वो हत्थे णिक्खेवो।

एषा द्वयोः अपि वो हस्ते निक्षेपः, नं० ५ से ष को सकार, प्राकृत मे द्विवचन नहीं होता है, अतः द्वयोः का बहुवचन दोण्णं होगा। नं० ११ से अकार लोप। १५ से पकार को वकार। २+१३ से 'स्त' को थकार। ४ से द्वित्व। ७ से पूर्व थकार को तकार। हत्थे। नं० ६ से न को ण। १६ से क्ष को ख। ४ से द्वित्व। ७ से ककार। एसा दोण्णं वि वो हत्थे णिक्खेवो। सख्यौ। अयं जणो दाणिं कस्स हत्थे समप्पिदो।

अयं जनः इदानीं। नं० ६ से दोनों नकारों को णकार। ११ से इकार लोप और ईकार को इकार, अयं जणो दाणिं। नं० २+२७ से अकारान्त शब्द के प्रथमा विभक्ति मे ओकार सर्वत्र होता है, अतः उसका वारंवार साधुत्व नहीं दिखाते हैं। कस्स हत्थे समप्पिदो। "कस्य हस्ते" का साधुत्व अभी पूर्ववाक्य मे कहा है। समर्पितः। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ३२ से त को द। समप्पिदो।

शकु०—ताद एसा उटअपज्जन्तचारिणी गब्भहारमन्थरा मिअवहू जदा सुहप्पसवा भविस्सदि तदा मे कंपि पिअणिवेदअं विसज्जइस्ससि, मा एदं विसुमरिस्ससि। तात ! एषा उटजपर्यन्तचारिणी गर्भभारमन्थरा मृगवधूः। नं० ३२

से 'त' को 'द'। ५ से ष को स। 'उटज'। नं० १६ से ट को ड। १ से ज लोप। नं० २१ से य को जकार। ४ से द्वित्व। ताद एसा उडअपज्जन्तचारिणी, गर्भभार०। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ७ से अकार। ६ से भ को ह। नं० १३ से ऋ को इकार। १ से ग लोप। ६ से घ को ह, मिअवहू। यदा सुखप्रसवा भविष्यति। न० २० से य को जकार। नं० ६ से ख को ह। ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। २ से य लोप। ४ से द्वित्व। ३२ से त को द। जदा सुहप्पसवा भविस्सदि। तदा मे कमपि प्रियनिवेदकं विसर्जयिष्यसि। नं० ११ से अपि के अकार का लोप। नं० ३ से रेफ लोप। १ से यकार और ककार का लोप। ६ से न को ण। ३ से रेफ लोप। ५ से द्वित्व। १ से दोनों यकारों का लोप। ५ से ष को स। ४ से सकार द्वित्व। तदा मे कम्पि पिअणिवेदअं विसज्जइस्ससि। मा एतद् विस्मरिष्यसि। एतद्। नं० २ + ३४ दलोप। नं० २ + ३२ से तु को अनुस्वार। ३२ से त को द। एदं। विपूर्वक स्मृ को विसुमर आदेश। अन्य कार्य पूर्ववत्। मा एदं विसुमरिस्सदि।

पुनस्तत्रैव शाकुन्तले सप्तमेऽङ्के १३ श्लोकादनन्तरम्—

मा क्खु चवलदं करेहि, जहिं तहिं ज्जेव्व अत्तणो पइदिं दंसेसि। मा खलु चपलतां कुरु। खलु का प्राकृत मे क्खु अव्यय। नं० १५ से प को व। ३२ से त को द। प्राकृतत्वात् आवन्त को ह्रस्व। प्राकृत मे ऋकारान्तधातु को गुण शप्। अकारान्त मे सर्वत्र एकार होता है, यह प्रथम कह आये हैं। मा क्खु चवलदं करेहि। जहिं तहिं ज्जेव्व अत्तणो पइदिं दसेसि।

यत्र तत्र एव, आत्मनः प्रकृतिं दर्शयसि। नं० २० से यकार को जकार। सप्तमी के एकवचन मे हिं होता है, जहिं तहिं, एव को ज्जेव्व। प्रकृतिं। नं० ३ से रेफ लोप। १ से क लोप। १३ से ऋ को इकार। ३२ से त को द। पइदिं। 'दर्शयसि' नं० ३ से रेफ लोप। ५ से श को सकार। नं० २ + ३३ से अनुस्वार। ण्यन्त प्रत्यय का एकार। दंसेसि। आत्मनः। नं० २ से अधःस्थ मकार का लोप। ४ से त द्वित्व। नं० २ + ३० से ह्रस्व। ६ से न को ण। ११ से विसर्ग को ओ। अत्तणो।

बालः—जिम्भ ले सिंहसावअ! जिम्भ, दन्ताइं दे गणइस्सं।

प्राकृत मे परस्मैपद-आत्मनेपद का तथा पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग, नपुंसक लिङ्गादि के प्रयोग मे कामचार है। अतः जम्भ का परस्मैपद। दन्त का नपुंसकलिङ्ग है। जृम्भस्व रे सिंहशावक! जृम्भस्व। नं० १३ से ऋ को इकार। २५ से र को लकार। अथवा 'रसोर्लशौ' इस हैमसूत्र से। नं० ५ से श को स। १ से क लोप। जिम्भ ले सिंहसावअ! जिम्भ। दन्तान् ते गणयिष्यामि। नपुंसक लिङ्ग होने से 'दन्ताइं' नं० ३२ से त को द। गणयिष्यामि। नं० १ से यकार लोप। ष्यम् के यकार का नं० २ से लोप। ४ से द्वित्व। गणइस्सं।

प्रथमा—अविणीद! किं णो अवच्चणिव्विसेसाइं सत्ताइं विप्पकरेसि।

अविनीत! किं नो। नं० ६ से दोनो नकारों को णकार। ३२ से त को द। अविणीद! किं णो। अपत्यनिर्विशेषाणि सत्त्वानि विप्रकरोषि। नं० १५ से प को व। १७ से त्य को चकार। ४ से द्वित्व। ६ से नकार को णकार। ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ५ से श-ष को सकार। ३ से व लोप। ४ से द्वित्व। अवच्चणिव्विसेसाइं सत्ताइं। विप्रकरोषि। नं० २ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ५ से ष को स। शप्, गुण एकार। विप्पकरेसि।

पुनः—हन्त वड्ढइ व्विअ दे संरम्भो, ठाणे क्खु इसि जणेण 'सव्वदमणो' त्ति किदणामहेओऽसि।

हन्त वर्धते इव ते संरम्भः। इव अव्यय के स्थान मे प्राकृत मे व्विय होता है। नं० ३२ से त को द। नं० २+३१ से सु को ओकार। वड्ढइ व्विअ दे संरम्भो। स्थाने खलु ऋषिजनेन। स्था का प्रकृतिभूत ष्ठा का नं० ८ से ष लोप। स्था आदिस्थ है, इससे नं० ४ से द्वित्व नहीं होगा। खलु के स्थान मे क्खु प्राकृत मे होता है। नं० १३ से ऋ को इकार। ५ से ष को स। नं० ६ से दोनों नकारों को णकार। ठाणे क्खु इसिजणेण। सर्वदमन इति कृतनामधेयोऽसि। नं० २ से रेफ लोप। ४ से वकार द्वित्व। ६ से णकार। २+३४ से स लोप। २+३१ से ओकार। २+३८ से इकार को तकार। सव्वदमणो त्ति। नं० १३ से इकार। ३२ से त को द। ६ से णकार। ६ से ध को ह। १ से य लोप। किदणामहेओऽसि।

द्वितीया—एसा क्खु मं केसरिणी लंघइस्सदि, जइ से पुत्तअं ण मुंचिस्सदि।

एषा त्वां केसरिणी। नं० ५ से ष को स। त्वां को तुमं। केसरिणी। लङ्घयिष्यति। नं० १ से य लोप। २ से ष्यगत य लोप। ५ से सकार। ४ से स द्वित्व। ३२ से दकार। लंघइस्सदि। यदि तस्य पुत्रकं न मोक्ष्यसि। नं० २० से य को जकार। १ से द लोप। तस्य एवम्, तस्याः के स्थान मे से आदेश होता है। नं० ३ से रेफ लोप। ४ द्वित्व। १ से क लोप। ६ से न को ण। मुच्धातु से इट् नुम्। क्योंकि प्राकृत मे अनिट् सेट् का विवेक नहीं है। नं० ३ से य लोप। ४ से द्वित्व। ३२ दकार। जइ से पुत्तअं ण मुंचिस्सदि।

## पुनस्तत्रैव सप्तमेऽङ्के एकत्रिंशत्तम-श्लोकादनन्तरम्।

शकुंतला—( स्वगतम् ) दिट्ठिआ अआरणपच्चादेसी ण अज्जउत्तो। ण उण सत्तं अत्ताणं सुमरेमि। अथवा ण सुदो सुण्णहिअआए मए अअं सावो। जदो सहीहिं अच्चाअरेण संदिट्ठम्हि-'सो राआ जइ तुमं ण सुमरेदि तदा एदं अंगुलीअअं दंसेसि त्ति। दिष्ट्या अकारणप्रत्यादेशी न आर्यपुत्रः। नं० २+१२ से ष्ट को ठ। ४ से द्वित्व। ७ से ट। टा को आ। दिट्ठिआ। नं० १ से ककार लोप। नं० ३ से रेफ लोप। १७ से त्य को च। ४ से द्वित्व। ५ से श को स। ६ से णकार। २१ से र्य को जकार। ४ से द्वित्व। १० से ह्रस्व अथवा २+३० से ह्रस्व। १ से प लोप। ३ से रेफ लोप। ४ से तकार द्वित्व। दिट्ठिआ-अआरणपच्चादेसी ण अज्जउत्तो। 'न पुनः शप्तमात्मानं स्मरामि'। नं० ६ से णकार। १ से प लोप। ६ से णकार। ११ से विसर्ग लोप। ५ से श को स। ८ से पकार का लोप। ४ से द्वित्व। एवम्-नं० २ से अधःस्थित मकार का लोप। ४ से द्वित्व। २+३० से आकार को अकार। ६ से णकार। स्मृ को 'सुमर' आदेश। ण उण सत्तं अत्ताणं सुमरेमि। अथवा न श्रुतः शून्यहृदयया मया अयं शापः। नं० ३२ से थ को ध। ६ से न को ण। ५ से श को स। ३ से रेफ लोप। आदिस्थ होने से सकार द्वित्व नहीं होगा। नं० ३२ से तकार को दकार। नं० ५ श को स। २ से य लोप। ६ से णकार। ४ से द्वित्व। संयुक्त णकार परे है अतः मधूकादिक मे माना जायगा। तो नं० २+४ से ऊकार को उकार हो जायगा अथवा नं० २+३ से उकार होगा। हृदय शब्द के ऋ को नं० १३ से इकार। १ से दकार यकार का एवम् अयं के यकार का लोप। नं० ५ से

श को सकार। १५ से प को वकार। अथवा या सुदो सुण्णहिअआए मए अअं सावो।

यतः सखीभिः अत्यादरेण संदिष्टास्मि—। नं० २० से य को जकार। ३२ से त को द। ११ से विसर्ग को ओकार। नं० ६ से ख को हकार। नं० १७ से त्य को चकार। ४ से द्वित्व। नं० २×१२ से ष्ट को ठ। ४ से द्वित्व। ७ से टकार। जदो सहीहिं अच्चादरेण संदिट्ठम्हि। स राजा यदि त्वां न स्मरति, तदा इदमङ्गुलीयकं दर्शयिष्यसि। नं० २+२४ और ३१ से ओकार। सो। १ से ज लोप। २० से य को जकार। १ से द लोप। ६ से णकार। ३२ से त को दकार। एतत् के अन्त्य तकार का नं० २+३४ से लोप। २+३३ से अनुस्वार। ३२ से दकार। न० १ से यकार ककार का लोप। दर्शयिष्यसि नं०। ३ से रेफ लोप। २+२१ से अनुस्वार। २ से य लोप। ५ से श को सकार। एयन्त की एकार है। अतः द्वित्व नं० ४ से नहीं होगा। क्योंकि दीर्घ और अनुस्वार से पर को द्वित्व नहीं होता है। नं० २+२८ से 'इति' शब्द की इकार को तकार। सो राआ जइ तुमं ण सुमरेदि तदा एदं अंगुलीअअं दंसेसि त्ति।

उत्तररामचरिते प्रथमेऽङ्के ८ श्लोकादनन्तरम्—

सीता—जाणामि, अज्जउत्त! जाणामि। किन्तु सन्दावआरिणो बन्धुजणविप्पओआ होन्ति।

जानामि आर्यपुत्र! जानामि। नं० ६ से नकार को णकार। २१ से र्य को ज आदेश। ४ से द्वित्व। २+३० से आकार को अकार। १ से पकार का लोप। ४ से अगत रेफ का लोप। २ से द्वित्व। जाणामि, अज्जउत्त! जाणामि। किन्तु-सन्तापकारिणः। न० ३२ से त को द। १५ से प को वकार। १ से क लोप। किन्तु सन्दावआरिणो। बन्धुजनविप्रयोगा भवन्ति। नं० ६ से न को ण। ३ से रेफ लोप। २ से प द्वित्व। १ से यकार-गकार का लोप। भू को 'हो' आदेश। अथवा नं० ६ से भ को ह-आदेश। प्राकृतत्वात्, शप् नहीं। होन्ति। बन्धुजणविप्पओआ होन्ति।

पुनस्तत्रैव—सीता-भअवं! णमो दे, अवि कुसलं सजामातुअस्स गुरुजणस्स अज्जाए सन्ताए।

भगवन्, नमः ते। नं० १ से ग लोप। प्राकृतत्वात् पदान्तस्थ नकार को भी अनुस्वार। नं० ६ से नकार को णकार। नं० ११ से विसर्ग को ओकार, ३२ से त को दकार। भअवं णमो दे। अपि कुशलं सजामातृकस्य गुरुजनस्य, आर्यायाः शान्तायाश्च। नं० १५ से प को वकार। ५ से श को स। नं० १४ से मातृगत ऋकार को उकार। १ से जकार का लोप। नं० २ से स्य गत यकार का लोप। ४ से सकार द्वित्व। ६ से नकार को णकार। नं० २१ से र्य को जकार। ४ से द्वित्व। नं० ५ से श को सकार, १ से चकार का लोप। षष्ठी विभक्ति को एकवचन आकारान्त स्त्रीलिङ्ग में होता है।

पुनस्तत्रै वाग्रे—अदो ज्जेव राहवकुलधुरंधरो अज्जउत्तो।

अतः एव। नं० ३२ से त को द। ११ से ओकार। एव अव्यय को ज्जेव प्रयोग होता है। राघव शब्द के घकार को नं० ६ से हकार। अज्ज उत्तो का साधुत्व कर आये हैं।

पुनरग्रे–चित्रपटदर्शने—के एदे उवरि णिरन्तरदिट्ठा उवत्थुवंति विअ अज्जउत्तं। के एते उपरि निरन्तरदृष्टा उपस्तुवन्ति इव आर्यपुत्रम्। नं० ३२ से तकार को दकार। १५ से प को व। नं० ६ से न को ण। १३ से ऋकार को इकार। नं० २+१२। से ष्ट को ठ। ४ से द्वित्व। ७ से टकार। दिट्ठा। १५ से पकार को व। नं० २+१३ से स्त को थ। ४ से द्वित्व। ७ से पूर्व थ को त। अज्जउत्तं का साधुत्व कई वार कह आये हैं, अतः पूर्ववत् उक्तसूत्रों से जानना।

पुनरग्रे—अम्महे, दलण्णव-णीलुप्पल-सामल-सिणिद्ध-मसिण-सोहमाण-मंसल-देहसोहग्गेण विम्हअ थिमिद ताद दीसमाण-सुन्दर सिरी अणादरखण्डिद-संकरसरासणो, सिहण्डमुद्धमुहमण्डलो अज्जउत्तो आलिहिदो।

अहो, दलन्नवनीलोत्पल०। नं० ६ से न्न को ण्ण। नं० ८ से त का लोप, ४ से पद्वित्व। स्यामल—नं० २ से य लोप। स्निग्ध। नं० २८ से विप्रकर्ष तत्स्वर युक्तता होने से सिनिग्ध हुआ। नं० ६ से नकार को णकार। ८ से ग लोप। ४ से द्वित्व। ७ घकार को दकार। सिणिद्ध। मसृण-शोभमान। नं० १३ से इकार। ५ श को स। ६ से भ को हकार। ६ से न को ण। मांसलदेहसौभाग्येन। नं० १० से आकार को अकार। नं० २+६ से औकार को ओकार।

९ से भ को ह। २ से यलोप। ४ से द्वित्व। २+३० से भकारोत्तर आकार को अकार। ६ से नकार को णकार। विस्मयस्तिमित-तातदृश्यमानसुन्दरश्री: । नं० ३४ से स्म को म्ह। १ से य लोप। नं० २+१३ से स्त को थ। ३२ से त को द। तात-के द्वितीय त को भी द, दृश्यमान-दृश् को दीसमान। अथवा, नं० १३ से ऋ को इकार। २ से य लोप। ५ से श को स। इकार को नं० ११ में बहुल ग्रहण से दीर्घ। ६ से न को ण। २७ से श्री का विप्रकर्ष। और इकार स्वर-युक्तता। नं० ५ से श को स। अनादरखण्डितशङ्करशरासनः। नं० ६ से न को ण। ३२ से त को द। ५ से श को स। ६ से न को ण। शिखण्डमुग्धमुखमण्डलः, नं० ५ से श को स। ९ से ख को ह। नं० ८ से ग लोप। ४ से द्वित्व। ७ से ध को द आर्यपुत्रः। नं० २१ से र्य को ज। ४ से द्वित्व। २+३० से आकार को अकार। १ से प लोप। ३ से त्रगत रेफ लोप। ४ से त द्वित्व। आलिखितः। नं० ९ से ख को ह। ३२ से त को द, आलिहिदो।

पुनरत्रैव—एदे क्खु तक्काल किद गोदाण मंगला चत्तारो भादरो विवाहदिक्खिदा तुम्हें। अम्महे जाणामि, तस्सिं जेव्व, पदे से तस्सिं जेव्व काले वत्तामि।

एते खलु तत्कालकृतगोदानमङ्गला०। नं० ३२ से त को द, खलु को क्खु प्राकृत में अव्यय है। नं० ८ से त लोप। ४ से ककार द्वित्व, नं० १३ से ऋ को इकार। ३२ से त को द। ६ से नकार को णकार। चत्वारो भ्रातरः। नं० ३ से व लोप, ४ से द्वित्व, ३ से भ्रा के रेफ का लोप। ३२ से त को द, विवाहदीक्षिता यूयम्। नं० १६ से क्ष को ख। ४ से द्वित्व। ७ से कक,र। ३२ से त को द। यूयम् का तुम्हें। अहं जानामि तस्मिन् एव प्रदेशे तस्मिन् एव काले वर्ते। अहं का अम्महे। नं० ६ से न को ण। नं० २ से तस्मिन् के अधः स्थित मकार का लोप। २ से सकार द्वित्व। एवं को जेव्व, आदेश। नं० ३ से रेफ लोप। ५ से शकार को सकार। वर्ते। आत्मनेपद मे प्राकृतत्वात् परस्मैपद। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से तकार द्वित्व, वत्तामि।

पुनरत्रैव—एसा पसण्णपुण्णसलिला भगवदी भागीरही।

एषा प्रसन्नपुण्यसलिला भगवती भागीरथी। नं० ५ से ष को स। ३ से

रेफ लोप । ६ से दोनो नकारों को णकार । नं० २ से अधःस्थ यकार का लोप । ४ से णकार द्वित्व । ३२ से त को द । नं० ९ से थ को हकार । भगवदी भागीरही ।

पुनस्तत्रैव—अग्रे दुर्मुखः—स्वगतम् ।

हा कधं सीदादेईए ईरिसं अचिन्तणिज्जं जणाववादं देवस्स कधइस्सं, अहवा णिओओ क्खु ईरिसो मन्दभाअस्स ।

हा कथं सीतादेव्या ईदृशम् । नं० ३२ से थ को ध । और इसी से त को द । १ से व लोप । षष्ठी मे एकार देईए । नं० १ से दलोप । नं० २ + ११ से ऋ को रि । ५ से श को स । ईरिसं । अचिन्तनीयं जनापवादं देवस्य कथयिष्यामि । नं० २ + १८ से यकार को ज्ज आदेश । पूर्व को संयुक्त परे होने से नं० २ + ३० से ह्रस्व इकार । ६ से णकार । १५ से प को व । नं० २ से यलोप । ४ से सकार द्वित्व । ३२ से थकार को धकार । १ से य लोप । 'स्य' का पूर्ववत् य लोप द्वित्व । कधइस्सं । अथवा नियोगः खलु ईदृशो मन्दभागस्य । नं० ९ से थ को हकार । ६ से णकार । १ से यकार गकार का लोप । खलु को क्खु आदेश । १ से द लोप । नं० २ + ११ से ऋ को रि आदेश । ५ से श को स । १ गकार २ से यकार लोप । ४ से सकार द्वित्व जानना ।

पुनस्तत्रैव दुर्मुखः—कधं दाणिं अग्गिपरिसुद्धाए गब्भपरिप्फुडिदपवित्तरहुउलसन्ताणाए देईए दुज्जणवअणादो एव्वं अणज्जं अज्झवसिदं देवेण ।

कथमिदानीम् अग्निपरिशुद्धायाः । नं० ३२ से थ को धकार । नं० ११ से इदानीम् के इकार का लोप और अन्त्य ई को ह्रस्व । अथवा २ + ३ से इकार । नं० ६ से न को ण । नं० २ से अधःस्थ नकार का लोप । ४ से गकार द्वित्व । ५ से श को सकार । गर्भपरिस्फुटितपवित्ररघुकुलसन्तानाया देव्याः । नं० ३ से रेफ लोप । ४ से सकार द्वित्व । ७ से पूर्व भ को ब । गब्भ । नं० ८ से सकार का लोप । ४ से द्वित्व । ७ से पूर्व फ को प । नं० १६ से ट को ड । ३२ से त को द । नं० ३ से त्र के रेफ का लोप । ४ से त द्वित्व । नं० ९ से घ को ह । १ से क लोप । ६ से न को ण । देव्याः के १ से वकार का लोप । देईए । दुर्जनवचनात् एवं अनार्यम् । नं० ३ से रेफ लोप । ४ से जकार द्वित्व । ६ से नकार को णकार । १ से चकार का लोप । ६ से ण । पञ्चमी विभक्ति को दो आदेश पूर्व को दीर्घ ।

नं० २ + २३ से द्वित्व । एव्वं । नं० २१ से र्य को जकार । ३ से द्वित्व ६ से णकार । २ + ३० से आकार को अकार । अणज्जं । अध्यर्वासितं देवेन । नं०२२ से ध्य को झकार । ४ से द्वित्व । ७ से पूर्व झ को ज । ३२ से त को द । ६ से न को णकार । अज्झवसिदं देवेण ।

पुनस्तत्रैव उत्तररामचरिते तृतीयेऽङ्के नवमश्लोकादनन्तरम्—

सीता—हद्धी हद्धी मं मन्दभाइणिं उद्दिसिअ आमीलन्तणेत्तणीलुप्पलो मुच्छिदो ज्जेव, हा हा कधं धरिणी पिट्ठे णिरुच्छाहं णीसहं विपल्हत्थो, भअवदि तमसेः परित्ताहि २ जीवावेहि अज्जउत्तं, ( इति पादयोः पतति )

हा धिक् हा धिक् । यहां 'हद्धी–हद्धी' यह पाठ प्रतीत होता है । नं०२ + ३४, से अन्त्य का लोप । २ + ३५ से ह के परे दीर्घ । २ + २३ से धकार द्वित्व, ७ से पूर्व धकार को दकार । नं० २ + ३० से ह्रस्व । एवम्–हद्धी २ यह प्रतीत होता है । मां मन्दभागिनीम् उद्दिश्य आमीलन्नेत्रनीलोत्पलो मूर्छित एव । नं० १ से गकार का लोप । नं० ६ से नकार को णकार । अमि के पूर्व को सर्वत्र ह्रस्व होता है. मं 'उद्दिसिय' नं० २ + ३६ से क्त्वा को इय आदेश । ५ से श को स । प्राकृत मे परस्मैपद शतृ प्रत्यय के स्थान मे अन्त का प्रयोग होता है । जैसे चलन्त, गच्छन्त, पठन्त । एवम्, आमीलन्त । नं० ६ से न को ण । ३ से रेफ लोप । ४से तकार द्वित्व । पुनः ६ से ण । नं० ८ से तकार लोप ४ से द्वित्व नं० ११ से अकार उकार को उकार । नं०३ मे रेफ लोप । ४ से द्वित्व । ७ से चकार । नं० २ + ३० से ऊ को उ ह्रस्व । ३२ से तकार को दकार । एव को प्राकृत मे ज्जेव का प्रयोग होता है । हा हा कथं धरिणीपृष्ठे निरुत्साहं, निःसहं विपर्यस्तः। नं० ३ से थ को ध । नं० १३ से ऋ को इकार । ८ से षकार का लोप । ४ से द्वित्व । ७ से टकार । पिट्ठे । नं० ६ से णकार । २३ से त्स को छकार, ४ से द्वित्व । ७ से चकार । 'निःसहं' । नं० ६ से णकार । ११ से विसर्ग लोप, इकार दीर्घ । 'विपर्यस्तः' यहां भी, 'विपल्लत्थो' पाठ ठीक है, क्योंकि 'पर्यस्तपर्याण-सौकुमार्येषु लः' से र्य को लकार ४ से द्वित्व । संभवतः प्राकृतानभिज्ञ संशोधक का दोष है, अस्तु यदि पर्यस्तपर्याण० सूत्र को वैकल्पिक माने तो नं० २१ से र्य को जकार ४ से द्वित्व पज्जत्थो होगा, पल्हत्थो नहीं । नं० २ + १३ से स्त को थ।

६ से द्वित्व । ७ से तकार । विपल्लत्थो । भगवति । नं० १ से ग लोप । ३२ से दकार । परित्राहि । प्राकृतत्वात्परस्मैपद । नं० ३ से रेफ लोप ।४ से द्वित्व । जीव-य । ण्यन्त होने से आप का आगम । नं० १५ से पकार को व आदेश । प्राकृत-त्वात् 'हि' का लोप नहीं होगा । आर्यपुत्रः । नं० २१ से र्य को जकार । ४ से द्वित्व । नं० २+३० से ह्रस्व । नं० ३ से रेफ लोप । ४ से द्वित्व । अज्जउत्तं ।

पुनस्तत्रैव—द्वादशतमश्लोकानन्तरम् ।

सीता—( समन्युगद्गदम् ) अज्जउत्त ! असरिसं खु एवं वअणं इमस्स वुत्तन्तस्स । ( सास्रम् ) अहवा किं त्ति । वज्जमई जम्मन्तरेसु विपुणो असंभा-विददुल्लहदंसणा मं ज्जेव मंदभाइणिं उद्दिसिय वच्छलस्स एवंवादिणो अज्ज-उत्तस्स उवरि णिरणुक्कोसा भविस्सं ! अहं एदस्स हिअअं जाणामि, मम एसो त्ति ।

आर्यपुत्र ! असदृशं खलु एतत् वचनं अस्य वृत्तान्तस्य । नं० २१ से र्य को जकार । ४ से द्वित्व । ३० से आकार को अकार ।१ से प लोप । ३ से रेफ लोप । ४ से द्वित्व । असदृशं । १ से द लोप । नं० २+११ से ऋ को रि । ५ से श को स । खलु के स्थान खु अथवा क्खु अव्यय । नं० २+२६ से अन्त्य द का लोप । २+३३ से अनुस्वार । ३२ से दकार । एदं । नं० १ से च लोप । ६ से नकार को णकार । वअणं । इमस्स । स्य के यकार का लोप । द्वित्व । पूर्ववत् । नं० १४ से ऋ को उकार । वुत्तन्तस्स । आकार को नं० २+३० से ह्रस्व । य लोप सद्वित्व पूर्ववत् । ( सास्रम् ) अथवा । नं० ६ से थ को हकार । अहवा । किमिति । नं० ११ से इकार लोप । किं त्ति अनुस्वार से पर होने से तकार २+२८ से नहीं होगा । द्वित्व 'त्ति' पाठ होने से त आदेश । वज्रमयीं । नं० ३ से रेफ लोप । २ से द्वित्व । १ से य लोप। प्राकृतत्वात् अम् के पर ह्रस्व। वज्जमई । जन्मान्तरेषु अपि । न्म को मकार । ४ से द्वित्व । नकार तकार को संयुक्त होने से नं० २+३० से ह्रस्व । ५ से ष को सकार । ११ से अपि के अकार का लोप । १५ से पकार को व आदेश । पुनः । ६ से णकार । ११ से ओकार । पुणो । असंभावितदुर्लभदर्शनम् । नं० ३२ से त को द । ३ से रेफ लोप । ४ से द्वित्व । ९ से भ को ह । ५ से श को स । ३ से रेफ लोप । ६ से नकार को

णकार। दृश् धातु को वक्रादि मे मानकर। २×२१ से अनुस्वार। असंभाविद दुल्लहदंसणं। माम् एव। मां को मं। एव अव्यय को ज्जेव। मन्दभागिनीम्। नं० १ से गकार का लोप। ६ से नकार को णकार। प्राकृत द्वितीया के एक वचन मे ह्रस्व। मंदभाइणिं। उद्दिश्य। नं० २+३६ से क्त्वा को इय आदेश। ५ से श को स। उद्दिसिय। वत्सलस्य। नं० २३ से त्स को छकार। ४ से द्वित्व। ७ से चकार। २ से य लोप। ४ से द्वित्व। वच्छलस्स। एवं वादिणो। अज्ज उत्तस्स। नं० ६ से न को ण। अज्जउत्त का साधुत्व र्य को ज। द्वित्व। रेफ लोपादि से इसी प्रकरण के प्रारम्भ मे कर आये हैं। उपरि निरनुक्रोशा। नं १५ से प को व। ६ से न को ण। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से ककार द्वित्व।। ५ से श के स। णिरणुक्कोसा। भविष्यामि। भविस्सं। अहं एतस्य हृदयं जानामि। नं० ३२ से त को द। य लोप। स द्वित्व। नं० १३ से ऋकार को इकार। १ से दकार। यकार का लोप। ६ से न को ण। अहं एदस्स हिअअं जाणामि। मम एष इति। नं० ५ से ष को स। ११ से विसर्ग को ओकार। नं० २+२८ से इकार को तकार। मम एसो त्ति।

अस्मत्कृते भारतविजयनाटके चतुर्थेऽङ्के चरः—

**निगडियपयारविन्दा विकिण्णवसणा मिलाणमुहकन्ती।**
**चिन्तेन्ती किं पि मणसि सुदुक्खिया भारही माया ॥२॥**

निगडितपदारविन्दा। नं० १ से तकार दकार का लोप। महाराष्ट्री मे अकार ही रहेगा, परं तु आधुनिक प्राकृत कवि संप्रदायानुकूल, तथा सुखबोधार्थ नं०२×२५ से अकार को यकार आदेश होगा। विकीर्णवसना। नं० ३ से रेफ लोप। २ से णकार द्वित्व। संयुक्त णकार परे होने से। नं० २+३० से इकार को ह्रस्व। ६ से नकार को णकार। म्लानमुखकान्तिः। नं २७ से मकार लकार का विप्रकर्ष। पूर्ववर्ण मकार के साथ इकार का योग। नं० ६ से नकार को णकार। ८ से ख को ह। कान्ति संयोगी है अतः २×३० से आकार को ह्रस्व। २+३४ से सु का लोप। २+३५ से इकार को दीर्घ। मिलाणमुहकन्ती। चिन्त-यन्ती। णयन्त होने से एकार। चिन्तेन्ती। किमपि। नं० ११ से अकार का लोप।

मनसि। ६ से न को ण। मणसि। सुदुःखिता। नं० ११ से विसर्ग लोप। ४ से ख द्वित्व। ७ से ककार। १ से त लोप। नं० २+२५ से यकार सुदुक्खिया। भारती माता। नं० २+२६ से तकार को हकार। १ से त लोप। २+२५ से यकार। भारही माया।

पुनस्तत्रैव—चरः—सव्वत्थ वङ्गदेसम्मि घणलोलुवेहिं कम्पणी-पुरिसेहिं तिगुणिओ करो पवड्ढिओ।

सर्वत्र वङ्गदेशे। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से वकार द्वित्व। सर्वादिक की सप्तमी के एक वचन मे स्सिं, म्मि त्थ तीनों का यथेच्छ आदिष्ट प्रयोग शुद्ध होता है। अतः त्थ आदेश होने से, सव्वत्थ। वङ्गदेशे। नं० ५ से श को स। वङ्गदेसम्मि। धनलोलुपैः। नं० ६ से न को ण। १५ से प को व। भिस् को हिं। घणलोलुवेहिं। कम्पनीपुरुषैः। नं० ६ से न को ण। नं० २+२६ से रु के उकार को इकार, ५ से ष को स। कम्पणीपुरिसेहिं। त्रिगुणितः करः प्रवर्द्धितः। नं० ३ से त्रगत रेफ का लोप। १ से त लोप। २+३७ से ओकार। तिगुणिओ करो। न० ३ से दोनो रेफों का लोप। नं० १ से त लोप। वृधधातु के ध को ढ, पवड्ढिओ।

पुनस्तत्रैव—चरः—तदो पवड्ढियकरदाणम्मि असमत्था वङ्गदेसीअ पुरिसा कम्पणी-पुरिसेहिं वहु कुट्टिया। तदो वि घणाभावेण तिगुणियकरधण अददमाणा सव्वओ कण्डगाइणोहिं बिल्लदण्डेहिं एव्वं कुट्टिया जेण के वि मिआ, के वि मुच्छिआ जाआ।

ततः प्रवर्धितकरदाने। नं० ३ से त को द। नं० ११ से विसर्ग को ओकार। नं० ३ से दोनों रेफों का लोप। वृधधातु के ध को ढ आदेश। ४ से द्वित्व। ७ से प्रथम ढ को ड आदेश। १ से त लोप। २+२५ से अकार को यकार। नं० ६ से न को ण। तदो पवड्ढियकरदाणम्मि। असमर्थाः वङ्गदेशीयपुरुषाः। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ७ से तकार। बहुवचन मे ओकार। न० ५ से श को स। १ से य लोप। नं० २+२६ से उकार को इकार। ५ से ष को स। "असमत्था वङ्गदेसीअ पुरिसा कम्पणीपुरिसेहिं"। इनका साधुत्व पूर्ववत्। बहु कुट्टिताः। नं० १ से त लोप। नं० २+२५ से यकार। बहुकुट्टिया। ततोऽपि घनाभावेन त्रिगुणितकरदानं। नं० ३२ से त को द। १५ से प को व। ६ से न को ण। नं० ३ से रेफ लोफ। १ से त लोप। ६ से

हो जाता है। यह अनेक नाटकों के उदाहरण दिखा कर सिद्ध कर के निश्चय करा दिया है कि इस लघु प्राकृत व्याकरण से केवल सप्ताह मात्र मे एक घटिका मात्र प्रति दिन देखने से प्राकृत भाषा का अच्छा बोध हो जाता है। जिससे निर्बोध नाटकों के तथा जैनागम, बौद्धागमों के प्राकृत का ज्ञान हो जाता है। आशा है, प्राकृत भाषा जिज्ञासु विद्वत्समाज इससे पूर्ण लाभ उठाकर इसका आदर करेगा। इति।

यथा जैनागम—दश वैकालिक सूत्र

**जहा दुमस्स पुप्फेसु भमरो गिण्हइ रसं**
**ण य पुप्फं किलामेइ सो य पीणाइ अप्पयं।**

यथा—नं. (२० (६) से जहा। द्रुमस्य। नं. २+३+४ से। दुमस्स। पुष्पेषु। नं. २—१४ से ष्प को फ। ४ से द्वित्व। ७ से प। ५ से ष को स। पुप्फेसु सिद्ध होगा। भ्रमरः। ३+२+३१ से भमरो। गृह्णाति। ३० से णकार की ऊर्ध्व स्थिति। नं. १३ से इकार, १ से तलोप। प्राकृतत्वात् ईकार, गिण्हई। न च। नं. ६ से ण। १ से चलोप। १।२५ से यकार। पुष्पं का पुप्फं पूर्ववत्। क्लामयति। नं. २८ से क्लाम का किलम, ण्यन्त से आकार एवम् एकार। नं. १ से त लोप। "स च"। पूर्ववत्, ओकार, च लोप, यकार। प्रीणाति। नं० ३ से रेफ लोप। १ से तलोप पीणाइ। आत्मानं का अप्पयं।

आवश्यक सूत्र—

**असंजयं न वंदिज्जा मायरं पियरं सुअं**
**सेणावइं पसत्थारं राआणो देवयाणिय।**

उपसग तथा समास होने पर भी यत शब्द का आदित्व है।

असंयतं। नं. २० से ज। १ से तलोप, २+२५ से य। वंदेत्, लिङ् लकार मे ज्ज होने से वंदिज्जा। एवम्—मातरं पितरं सुतं. तीनों में न १ से तलोप। २+२५ से यकार। सेनापतिं, नं. १ से तलोप, ६ से णकार। प्रशास्तारं। नं. ३ से रेफलोप। ५ से सकार। नं० २+१५ से थ। ४ से द्वित्व। ७ से तकार। २+३० से आकार को ह्रस्व। राजानः। न. ११ से विसर्ग को ओकार। नं. जलोप। दैवतानि। नं० २+८से ऐकार को एकार। नं० १ से तलोप। ६ से ण

२ + २५ से यकार। देवयाणि। पूर्ववत्। चलोप। यकार। गाथा का भावार्थ यह है कि सयत-पञ्चमहाव्रती साधू, यती, असंयत-गृहस्थ की वन्दना न करे पर तु व्यवहार सूत्र में आदर सत्कार के लिये प्रकारान्तर से अभ्युत्थान मात्र की आज्ञा है। वन्दना की नहीं।

## वंदित्तादि सूत्र—

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आयरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं। एसो पंचणमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो मंगलाणं सव्वेसि प्रथमं हवइ मंगल।

प्राकृत मे सर्वत्र चतुर्थी के स्थान मे षष्ठी ही होती है, अस्तु। यहां सर्वत्र नं० ५ से नमः के नकार को णकार। एवम्, ११ से ओंकार होगा। अर्हताम्, प्राकृत में शतृप्रत्ययान्त से नुम् अकारान्तता हो जाती है, जैसे चलन्ताणं गच्छन्ताणं अरिहंताणं। अर्हन्त के, नं० २७ से रेफ इकार का वर्णविश्लेष और पूर्व में इकार। अरिहंताणं। नमः सिद्धानाम्, उक्त सूत्रों से सिद्ध है। नमः आचार्याणाम्। नं० २ + २० से र्य को रिय आदेश। नं० १० से 'चा' को ह्रस्व। १ से चलोप। नं० २ + २५ से यकार। ६ से णकार। उपाध्यायानां। नं० १५ से 'प' को व। नं० २२ से ध्य को झ। ४ से द्वित्व। ७ से पूर्व झ को जकार। नं० २ + ३० से संयुक्त ज्झ पर रहने से पूर्व को ह्रस्व। उवज्झायाणं। लोके सर्वसाधूनां। नं० १ से ककार लोप। ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ६ से 'ध' को ह। लोए सव्वसाहूणं। सर्वत्र षष्ठी बहुवचन में आम् को णं आदेश जानना। एष। नं० ५ से सकार। नं० २ + ३१ से ओकार। एसो। नमस्कारः। नं० ६ से णकार। ११ से 'स्' को ओकार। नं० २ + २३ से ककार द्वित्व। नं० ११ मे विसर्ग को उकार। २ + ३१ से नु को ओकार। णमुक्कारो। सर्वपापप्रणाशनः। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। १५ से वकार। ३ से प्रगत रेफ का लोप। ४ से द्वित्व। ६ से दोनों नकारों को णकार। ५ से श को स। पूर्ववत् ओकार, सव्वपावप्पणासणो। मंगलानां च। आम् को णं आदेश। प्रथमं। नं० ३ से रेफ लोप। प्रथमशिथिलनिषधेषु। ढः से ढकार पढमं। भवति। नं० ६ से भ को हकार। १ से तलोप। हवइ मंगलम्।

भगवतीसूत्र समाप्तौ—

**वियसिय अरविंदकरा णासियतिमिरा सुहासिया देई**
**मज्झं पि देउ मेहं बुहविबुहणमंसिया णिच्चं।**

विकसित नं० १ से ककार तकार का लोप। नं०२+२५ से यकार। वियसिय-अरविंदकरा, नाशिततिमिरा। नं० ६ से णकार। ५ से श को 'स' आदेश। पूर्ववत् तल्लोप। यकार। णासियतिमिरा। सुखासिता देवी। नं० ६ से ख को ह। नं० १ से तकार वकार का लोप। २+२५ से यकार। सुहासिया देई। मह्यम् अपि ददातु मेधाम्। नं० २२ से झ आदेश। ४ से द्वित्व। ७ से जकार, दा का दे। नं० १ से तकार लोप। ११ से अपि के अकार का लोप। ६ से धकार को हकार। प्राकृतत्वात् अम् के परे ह्रस्व। मज्झं पि देउ मेहं। बुध-विबुध नमंसिता। नं० ६ से 'ध' को 'ह'। ६ से णकार। पूर्ववत् तकार लोप। अकार को यकार। बुहविबुहणमंसिया। नित्यम्। नं० ६ से णकार। १७ से चकार। ४ से द्वित्व। णिच्चं।

स्थालीपुलाकन्यायेन कुछ जैनागमों के उदाहरण दिखाये हैं। ऐसे ही सब जैनागमों के प्रयोग सिद्ध हो जाते हैं। प्रायः पूर्ण रूप से अबाध प्राकृत का ज्ञान केवल इन ७० सूत्रों से हो जाता है। जिस को आप स्वयं अनुभव करके निश्चय कर सकते हैं।

अब कतिपय नाटकों के पुनः उदाहरण देते हैं।

स्वप्नवासवदत्ते-द्वितीयेऽङ्के—

किं भणासि? एसा भट्टिदारिआ माहवीलदामण्डवस्स पस्सदो कन्दुएण कीलदित्ति जाव भट्टिदारिअं उवसप्पामि। अम्मो इअं भट्टिदारिआ।

किं भणसि प्राकृतत्वाद् वैकल्पिक दीर्घ। एषा भर्तृदारिका। नं० ५ से को स। न० २+१५ से र्त को ट। ४ से द्वित्व। नं० १३ से ऋकार को इकार १ से क लोप। एसा भट्टिदारिआ। माधवीलतामण्डपस्य। नं० ६ से धका को हकार। ३२ से 'त' को 'द'। १५ से पकार को वकार। २ से य लोप। से सकार द्वित्व। माहवीलदामण्डवस्स। पार्श्वतः। नं० ३ से रेफ वकार का लोप ५ से श को स। ४ से सद्वित्व। नं० २+३० से संयुक्त सकार पर रहने के

को ह्रस्व। ३२ से त को द। ११ से विसर्ग को ओकार। पस्सदो। कन्दुकेन क्रीडति इति। नं० १ से क लोप। ६ से णकार। ३ से रेफ लोप। २५ से ड को ल, ३२ से तकार को दकार। नं० २+२८ से इति शब्द के आदिस्थ इकार को तकार। कन्दुएण कीलदि त्ति। भर्तृदारिकाम्। पूर्ववत् टकार द्वित्व, इकार का लोप। भट्टिदारिअं। उपसर्पामि नं० १५ से पकार को वकार। रेफ लोप, द्वित्व पूर्ववत्। अहो इयं भर्तृदारिका। अम्मो, आश्चर्यसूचक अव्यय। इयं। नं० १ से य लोप। इअं। भट्टिदारिआ का पूर्वोक्त सूत्रों से साधुत्व जानना।

पुनस्तत्रैव —

उक्करिणदकण्णचूलिएण वाआमसञ्जादसेदबिन्दुविइत्तिदेण परिस्सन्तरमणी-अदंसणेण मुहेण कन्दुएण कीलन्दी इदो एव्व आअच्छदि जाव उवसप्पिस्सं।

उत्कर्णितकर्णचूलिकेन। नं० ८ से तकार लोप। ४ से द्वित्व। ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। ३२ से 'त' को 'द'। रेफ लोप द्वित्व पूर्ववत्। नं० १ से क लोप। ६ से णकार। उक्करिणदकण्णचूलिएण। व्यायामसञ्जातस्वेदबिन्दुविचित्रितेन। नं० २ से आद्यस्थ यकार का लोप। १ से य लोप। ३२ से 'त' को 'द'। स्वेद-के वकार का नं० ३ से लोप। १ से च लोप। ३ से रेफ लोप। ३२ से दकार। ६ से णकार। वाआमसंजादसेदबिन्दुविइत्तिदेण। परिश्रान्तरमणीयदर्शनेन। नं० ३ से रेफ लोप। ५ से श को स। ४ से द्वित्व। 'न्त' को संयुक्त वर्ण परे होने से नं० २+३० से आकार को अकार। नं० १ से य लोप। नं० २+२१ से अनुस्वार। ३ से रेफ लोप। ५ से श को स। ६ से दोनों नकारों को णकार। परिस्सन्तरमणी-अदंसणेण। यहां 'रमणी' 'अ' प्रयोग में। नं० २+१६। 'उत्तरानीयर्योज्जो वा' इसको वैकल्पिक मानने से ज्ज आदेश नहीं। मुखेन। नं० ६ से ख को 'ह'। ६ से णकार, मुहेण। उपलक्षिता क्रीडन्ती। नं० ३ से रेफ लोप। २५ से ड को ल। ३२ से द। कीलन्दी। इदो एव्व आअच्छदि। नं० ३२ से त को द। ११ से विसर्ग को ओकार। नं० २+२५ से वकार द्वित्व। पूर्ववत् तकार को दकार। इदो एव्व आअच्छदि। जाव उवसप्पिस्सं। यावत् उपसर्पिष्यामि। नं० २० से यकार को जकार। नं० २+३६ से अन्त्य हल तकार का लोप। नं० १५ से पकार को वकार। ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। भविष्यत् उत्तम पुरुष में स्सं का प्रयोग होता है। जाव उवसप्पिस्सं।

## वेणीसंहारे चतुर्थेऽङ्के

सुन्दरकः—होदु। देव्वं दाणीं उवालहिस्सं। हं हो देव्व ? एआरहाणं अक्खोहिणीणं णाहो जेट्ठो भादुसदस्स भत्ता गङ्गेअद्दोणअङ्गराअसल्ल किवकिदवम्म अस्सत्थामप्पमुहस्स राअचक्कस्स सअलपुहवीमण्डले कणाहो महोराअदुज्जोहणो वि अण्णेसीअदि। अण्णेसीअन्तो वि ण जाणीअदि। कस्सिं उद्देसे वट्टदित्ति।

सुन्द०। भवतु दैवम् इदानीम् उपालप्स्ये। प्राकृत मे शप् के वैकल्पिक होने से भोतु। नं० ६ से 'भ' को ह। ३२ से तकार को दकार होदु। नं० २+७ से ऐकार को एकार। २+२३ से वकार द्वित्व। देव्वं। नं० ११ से इकार का लोप। नं० ६ से नकार को णकार। दाणीं। वस्तुतस्तु नं० ११ से बहुल ग्रहण से ह्रस्व दाणिं का प्रायः प्रयोग होता है। अस्तु। उपालप्स्ये। नं० १५ से यकार को 'ब'। प्राकृत मे सेट् होने से, इट् नं० ६ से 'भ' को ह। उवालहिस्स। हं हो अव्यय। दैव ! नं० २+७ से ऐकार को एकार। नं० २+२३ से वकार द्वित्व। देव्व। एकादशानाम्। नं० १ से ककार लोप। नं० २+८ से दकार को रेफ। २+१७ से शकार को हकार। एआरहाणं। आम् को णं आदेश। "एआदसाणं" यह मूल पाठ अशुद्ध है। किंतु 'एआरहाणं' यह पाठ ठीक है। 'अक्षौहिणीनाम्' नं० १६ से क्ष को 'ख' आदेश कर के अक्खोहिणी पाठ है, परंतु अक्ष्यादि मे पाठ मान कर छ आदेश कर के अच्छोहिणी होगा। लोक मे ऐसा ही प्रसिद्ध है। नं १८ से छादेश। ४ मे द्वित्व। ७ से चकार। षष्ठी बहुवचन मे णं अच्छोहिणीणं। नाथः। नं० ६ से ण। ६ से हकार। नं० २+३१ से ओकार। णाहो। भ्रातृशतस्य ज्येष्ठः। नं० ३ से रेफ लोप। ३२ से दोनों 'त' को 'द'। १४ से उकार। ५ से शकार को सकार। २ से यकार लोप। ४ से द्वित्व। ज्येष्ठः। नं० २ से य लोप। नं० ८ से ष लोप। ४ से द्वित्व। ७ से ठ को ट आदेश। भादुसदस्स जेट्ठो। भर्ता। नं० ४ से रेफ लोप। २ से तकार द्वित्व। भत्ता। "गाङ्गेयद्रोण(णा)अङ्गराजशल्यकृपकृतवर्म—" नं० १ से य लोप। नं० २+३० से आकार को ह्रस्व। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से द्वित्व। नं २ से शल्य के यकार का लोप। ४ से द्वित्व। ५ से सकार। नं० १३ से उभय ऋकार को इकार। १४ से 'प' को व। ३२ से त को द। नं० ३ से रेफ लोप। ४ से मकार द्वित्व। गंगेअद्दोणअङ्गराअसल्ल–किव–किदवम्म।

"अश्वत्थामप्रमुखस्य राजचक्रस्य सकलपृथिवीमण्डलैकनाथो" । नं० ४ से व लोप । ५ से स । ४ से द्वित्व । नं० ८ से सलोप । ४ से द्वित्व । ७ से तकार । ३ से रेफ लोप । ४ से द्वित्व । ६ से 'ख' को ह । २ से य लोप । ४ से द्वित्व । ६ से 'ख' को ह । २ से य लोप । ४ से द्वित्व । नं० १ से ज लोप । रेफ य लोप द्वित्व पूर्ववत् । सकल । नं० १ से क लोप । १४ से उकार । ६ से थ को ह । नं० २ + ७ से ऐकार को एकार । ६ से णकार । अस्सत्थामप्पमुहस्स । 'राअच-क्कस्स । सअलपुहवीमण्डलेक्कणाहो' । "महाराजदुर्योधनोऽपि अन्विष्यते" नं० १ से ज लोप । २१ से र्य को ज आदेश । ४ से द्वित्व । ६ से हकार । ६ से णकार । १५ से पकार को व । नं० ११ से अकार लोप । 'महाराअदुज्जोहणो वि अण्णेसीअदि' । 'अन्विष्यमाणोऽपि न ज्ञायते कस्मिन् उद्देश वर्तते इति' । प्राकृत मे कर्म प्रत्यय मे भी परस्मैपद होता है । कर्म मे 'ईअ' प्रत्यय धातु के साथ आता है । एवम्–अन्वेष् ईय् अन्तः । अन्तः यह शतृ का रूप है । एवम् पूर्ववत् । वलोप, णकार, द्वित्व, सकार होने से अण्णेसीअन्तो वि ण जाणी-अदि । पूर्ववत् । ईय प्रत्यय । कर्म मे प्रत्यय होने पर भी ज्ञाधातु को जा आदेश । 'ना' विकरणागम होगा । नं० ३२ से त को द । ण जाणीअदि । कस्मिन् । नं० २ से मलोप । ४ से द्वित्व । ५ से श को स । नं० २ + १५ से र्त को ट । ४ से द्वित्व । १ से तलोप । प्राकृतत्वात् परस्मैपद । नं० २ + २८ से इकार को तकार । अण्णेसीअन्तो वि ण जाणीअदि, कस्सिं उद्देसे वट्टइत्ति ।

## मुद्राराक्षसे प्रथमेऽङ्के

चन्दनदासः—अच्चादरो सङ्कणीओ । अह ईं । अज्जस्स प्पसाएण अखंडिदा मे वाणिज्जा । अत्यादरः शङ्कनीयः । नं० १७ से 'त्य' को च । ४ से द्वित्व । ३२ से त को द । नं० २ + ३१ से ओकार । अच्चादरो । नं० ५ से श को स । ६ से णकार । १ से य लोप । पूर्ववत् ओकार । सङ्कणीओ । अथ किं । नं० ६ से थ को ह । १ से कलोप । अह ईं । आर्यस्य प्रसादेन । नं० २१ से र्य को जकार । ४ से द्वित्व । नं० २ + ३० से आकार को अकार । नं० २ से य लोप । ४ से द्वित्व । ३ से रेफ लोप । १ से दलोप । ६ से णकार । अज्जस्स पसाएण । वस्तुतः प्रसादगत पकार को, आदिस्थ होने से द्वित्व नही होगा । अखंडिता । नं० ३२ से त को द । अखंडिदा । मे वाणिज्या । नं० २ से यलोप । ४ से द्वित्व ।

वाणिज्ज। पुनरग्रे—

सन्तं पावं। सारअणिसासमुग्गएण विअ पुण्णिमाचन्देण चन्दसिरिणा अहिअं णन्दन्ति पकिदिओ।

शान्तं पापम्। नं० २+३० से नकार तकार का योग होने से आकार को ह्रस्व। नं० ५ से श को स। १५ से वकार। शारदनिशासमुद्गतेन इव। नं० ५ से दोनों शकारों को सकार नं० १ से दकार तकार का लोप। नं० ८ से संयुक्त द का लोप। ४ से द्वित्व। ६ से णकार। इव अव्यय के स्थान मे विय अव्यय प्राकृत का है। पूर्णिमाचन्द्रेण चन्द्रश्रिया। नं० ३ से तीनों रेफों का लोप। ४ से द्वित्व। नं० २+३० से उकार को ह्रस्व। नं० २ से श्री के वर्णों का विश्लेष और पूर्व मे इकार। या को णा। पुण्णिमाचन्देण चन्दसिरिणा। अधिकं नन्दन्ति प्रकृतयः। नं० ६ से ध को ह। १ से कलोप। ६ से णकार। नं० ३ से रेफ लोप। १३ से ऋकार को इकार। नं० ३२ से तकार को दकार। जस् को ओकार। अहिअं णन्दन्ति पकिदिओ।

पुनस्तत्रैव—द्वितीयेऽङ्के।

जाणन्ति तन्तजुत्तिं जहट्ठिअं मण्डलं अहिलिहन्ति।
जे मन्तरक्खणपरा ते सप्पणराहिवे उवअरन्ति॥

जानन्ति तन्त्रयुक्तिं। नं० ६ से णकार। ३ से रेफ लोप। २० से जकार। ८ से क लोप। ४ से द्वित्व। जाणन्ति तन्तजुत्तिं। "यथास्थितं मण्डलं अभिलिखन्ति" नं० २० से जकार। ६ से थ को ह। ८ से सलोप। ष्ठा धातु है अतः ठकार अवशिष्ट रहेगा। नं० ४ से द्वित्व। ७ से टकार। नं०२+३० से संयुक्त पर होने से ह्रस्व। १ से तलोप। नं० ६ से भकार खकार को हकार। जहट्ठिअं मण्डलं अहिलिहन्ति। 'ये मन्त्ररक्षणपराः'। नं० २० से जकार। ३ से रेफ लोप। १६ से क्ष को ख। ४ से द्वित्व। ७ से ककार। 'जे मन्तरक्खणपरा' ते सर्पनराधिपें। नं० ३ से रेफ लोप। ४से द्वित्व। ६ से णकार। ६ से ध को ह। १५ से वकार। ते सप्पणराहिवे। उपचरन्ति। नं० १५ से वकार। १ से चलोप। उवअरन्ति।

इस प्रकार अनेक नाटकों के उदाहरण का साधुत्व केवल इन ७० सूत्रों से हो जाता है यह दिखा दिया। अब पाठकों के अभ्यासार्थ कुछ उदाहरण मुद्रा-

-राक्षस से ही देते हैं, साधारण भी सूत्रों का अनुगम कर के साधुत्व एवम् अनुवाद सुगमतया पाठक कर सकेंगे।

मुद्राराक्षसे २ अङ्के—आकाशे—

अज्ज किं तुमं भणा (ण) सि। को तुमं त्ति। अज्ज! अहं खु आहितुण्डिओ जिण्णविसो णाम। किं भणासि अहं वि अहिणा खेलिदुं इच्छामि त्ति। अह कदरं उण अज्जो वित्तिं उवजीवदि। किं भणासि, राअउलसेवको म्हित्ति, णं खेलदि एव्व अज्जो अहिणा। कहं विअ। अमन्तोसहिकुसलो वालग्गाही, मत्तो मातङ्गआरोही, लद्धाहिआरो जिदकासी राअसेवओ त्ति। एदे तिण्णि वि अवस्सं विणासमणुहोन्ति।

पुनस्तत्रैव - पञ्चमेऽङ्के भागुरायणः

का गदी। सुणादु सावगो। अत्थि दाव अहं मन्दभग्गो पढमं पाडलिपुत्ते णिवसमाणो रक्खसेण मित्तत्तणं उवगओ। तस्सिं अवसले रक्खसेण गूढं विसकण्णआ पओअ उप्पादिअ घादिदो देवो पव्वदीसरो।

रत्नावली नाटिका-द्वितीयेऽङ्के प्रारम्भे—

सुसंगता—हद्धी हद्धी कहिं दाणिं मम हत्थे सारिअपञ्जरं णिक्खिविअ गदा मे पिअसही साअरिआ। ता कहिं पुण एणं पेक्खिस्सं। कहं एसा खु (खलु) णिउणिआ इदो ज्जेव आअच्छदि। ता जाव एदं पुच्छिस्सं।

पुनस्तत्रैव-निपुणिका-

निपुणिका—(सविस्मयम्) अच्चरिअं २। अण्णण्णसदिसो पभावो मण्णे देवदाए। उवलद्धो खु मए भट्टिणो वुत्तन्तो। ता गदुअ भट्टिणीए णिवेदइस्सं।

इत्यादिकों का अनुवाद सुगमता से, केवल इन ७० सूत्रों का केवल आध घंटा प्रतिदिन १० का अनुगम कर के एक सप्ताह मे ही साधारण संस्कृतज्ञ भी कर सकता है। केवल इस पुस्तक के एक सप्ताह मात्र आध घंटा अनुगम करके बाँचने से प्राकृत मे प्रवेश हो जायगा।

प्राकृतभाषाऽभिज्ञताऽभिलाषियों के लिये—

मैं यह बता देना आवश्यक समझता हूँ कि एक महात्मा का आशीर्वाद है कि इस पुस्तक से एक सप्ताहमात्र मे पाली-प्राकृत का पूर्ण रूप से बोध हो जायगा। इत्यलम्।

इति श्री म० म० मथुराप्रसादकृत अभ्यासार्थमनुवादप्रकरणं समाप्तम्

—समाप्तश्चायं ग्रन्थः।—

प्राप्तिस्थानम्—

म० म० पं० श्रीमथुराप्रसाद दीक्षित

१४८ हजरियाना

झाँसी



# प्राकृत बालमनोरमा

रचयिता—
उपाध्याय श्री आत्मा
जैनमुनिः

णमोऽत्थुणंसमणस्सभगवओ महावीरस्स

# प्राकृत बालमनोरमा

## प्रथम भाग

रचयिता

जैनधर्म दिवाकर जैनागमरत्नाकर साहित्यरत्न उपाध्याय

मुनि श्री आत्माराम जी महाराज-पंजाबी

प्रकाशक

श्री जैन सुमति मित्र मंडल

( रावलपिण्डी )

प्रति १००० मू० २ आना

वीर सं० २४६२ [ ई० सन् १९३६ ] वि० सं० १९९३

---

लाला रामशरणदास के प्रवन्ध से कमर्शियल प्रिंटिंग वर्क्स,

गनपत रोड लाहौर में छपी।

## पुस्तक मिलने का पता—

[१] मंत्री श्री जैन सुमति मित्र मंडल, जैन बाजार-रावलपिण्डी शहर।

[२] ला० गुज्जरमल प्यारालाल जैन, चौड़ा बाजार-लुधियाना।

नोट—पुस्तकालयों के लिए यह पुस्तक बिना मूल्य भेजी जावेगी।

# चित्र परिचय



प्रस्तुत पुस्तक में जिस भाग्यशाली सद्गृहस्थ का चित्र दिया गया है वे रावलपिण्डी निवासी ला० रामकौर शाह जक्ख-जैन के सुपुत्र हैं आपका शुभ नाम ला० ताराशाह है। आपका जन्म वि० सम्वत् १६४२ मार्गशीर्ष प्रविष्टा २ मंगलवार को हुआ था। आप योग्य व्यापारी होने के अतिरिक्त धर्म में बड़ी अभिरुचि रखने वाले हैं। स्थानीय जैन समाज में आपकी असाधारण प्रतिष्ठा है। इसी लिए स्थानीय सभी जैन संस्थाओं में आपका हाथ है। धर्मार्थ जैन औषधालय के और जैनधर्म प्रकाशिनी सभा के आप कोषाध्यक्ष-खजान्ची हैं। जैन यंगमैन एसोशियेशनकी मैनिजंग कमेटी के आप सदस्य हैं, जीवदया तथा जैन साहित्य के प्रकाशन कार्य में आपने अपनी कमाई में से समय समय पर अच्छा दान दिया है। आप सराफी की दुकान करते हैं। जिस समय उपाध्याय श्री १००८ आत्माराम जी महाराज के शिष्यरत्न प्रसिद्ध वक्ता श्री १०८ खजानचन्द जी महाराज के सदुपदेश से रावलपिंडी शहर में श्री महावीर जैन मॉडरन् स्कूल की स्थापना हुई तो सब से प्रथम आपने

५०० रुपया नकद दिया, तथा पांच रुपया मासिक देने का वचन देकर सब को प्रोत्साहित किया । अधिक क्या कहें आप सरल स्वभावी, भद्र प्रकृति और धर्म के सच्चे प्रेमी हैं। प्रस्तुत पुस्तक भी इन्हीं के सद्व्यय से प्रकाशित की गई है। प्रत्येक भाविक सद्‌गृहस्थ को इनका अनुकरण करना चाहिये, जिससे कि धर्म की अधिक से अधिक प्रभावना होवे।

निवेदक—

महामंत्री श्री जैनसुमति मित्र मंडल,

[ रावलपिण्डी-शहर ]





[ ला० ताराशाह जक्ख ]

# प्रासंगिक नवेदन

प्रिय सुज्ञपुरुषो ! शास्त्रीयज्ञान से सिद्ध होता है कि यह आत्मा जब गर्भ में आता है तब आहारादि छै पर्याप्तियों— आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास-पर्याप्ति, मनःपर्याप्ति, और भाषापर्याप्ति को पूर्ण करके फिर जन्म धारण करता अर्थात् गर्भ से बाहर आता है। ये छैओं पर्याप्तिएं सार्थक और परस्पर सम्बन्ध रखने वाली हैं। यथा—आहार पर्याप्ति कर लेने पर शरीर की रचना होती है, और शरीर के निष्पन्न होने पर इन्द्रियें विकास पाती हैं, तथा इन्द्रियों के निष्पन्न होने पर श्वासोच्छ्वास का गमनागमन ठीक हो सकता है, एवं इन चारों के निष्पन्न हो जाने पर ही आत्मा के साथ सम्बन्ध रखने वाली मनः-पर्याप्ति को प्रत्येक विचार के लिये उपयोगी माना गया है। क्योंकि अन्वय व्यतिरेक धर्मों का विचार करना तथा प्रत्येक विषय की आलोचना करके उस की मीमांसा पूर्वक व्यवस्था करना यह सब मन का ही काम है। इसी प्रकार मन के द्वारा निर्धारित किये गये विषयों को प्रकट करना भाषा पर्याप्ति का काम है, अतः भाषा की शुद्धि के लिये शब्दशास्त्र की रचना हुई है। कारण कि भाषा शुद्धि के द्वारा ही अर्थज्ञान की सम्यक् प्रकार से प्राप्ति हो सकती है। जिस आत्मा को शब्द का ज्ञान सम्यक्तया प्राप्त नहीं हुआ, उस को अर्थ का ज्ञान भी यथार्थ नहीं होता !

यावन्मात्र सुसंस्कृत भाषायें हैं उन सब की नियम प्रदर्शक शिक्षा पुस्तिकायें दृष्टिगोचर हो रही हैं, जिन का, भाषा शुद्धि के लिये उपयोग किया जाता है। उन प्राचीन भाषाओं में से एक प्राकृत भाषा भी है जो सर्वांग सम्पूर्ण है! प्राचीन जैनसाहित्य प्रायः इसी भाषा में उपलब्ध होता है। परन्तु जैनागमों की भाषा *अर्द्धमागधी के नाम से प्रसिद्ध है जो कि एक प्रकार से परिमार्जित प्राकृत ही है।

इस समय प्राकृत भाषा के अनेक प्राचीन आचार्यों के निर्माण किये हुए "प्राकृतव्याकरण" मुद्रित होकर विद्वत्-समाज के सन्मुख आ रहे हैं। तथा उन्हीं के आधार पर नूतन शैली के अनुसार अनेक प्रकार की प्राकृत नियम-प्रदर्शक पुस्तकों का भी सम्प्रति पर्याप्त रूप से विकास हो रहा है! परन्तु उस में अधिकतर पुस्तकें गुजराती भाषा में उपलब्ध होती हैं। अतः मेरे मन में चिरकाल से यह विचार उत्पन्न हो रहा था कि एक ऐसी पुस्तक "प्राकृत-व्याकरण" की लिखी जावे कि जिस से हिन्दी भाषा भाषी संसार भी लाभ उठा सके। एतदर्थ मैं ने इस पुस्तक को लिखना आरम्भ किया, जिस का यह प्रथम भाग प्रकाशित

*देवा णं भंते कयराए भासाए भासंति, कयरा वा भासा भासिज्जमाणी विसिस्सति। गोयमा! देवा णं अद्धमागहाए भासाए भासंति सावि य णं अद्धमागहा भासा भासिज्जमाणी विसिस्सति।

[ व्या. प्र. शत. ५ उ. ४ सू. १९१ ]

होकर पाठकों की सेवा में उपस्थित हो रहा है। आशा है इस के अन्य भाग भी शीघ्र ही प्रकाशित हो कर पाठकों की सेवा में पहुंच जावेंगे।

इस की रचना करते समय कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य प्रवर श्री १०८ हेमचन्द्र सूरि कृत "सिद्धहेशब्दानुशासन" का आठवां अध्याय, पण्डित बेचरदास जी कृत "प्राकृत-मार्गोपदेशिका" प्रोफेसर डाक्टर बनारसीदास जी का बनाया हुआ अर्द्धमागधी रीडर इन तीन पुस्तकों को उपयोग में लिया गया है, अर्थात् इन के आधार से ही यह पुस्तक वर्तमान शैली को लक्ष्य में रख कर लिखी गई है। अतः मैं इन का आभारी हूं।

काल की कितनी विचित्र गति है, कि किसी समय पर जिस भाषा को राज्य का शासन प्राप्त हो चुका हो और व्यापारीवर्ग की भी जिस ने पर्याप्त सेवा की हो आज उस भाषा के नाम से भी जनता प्रायः अपरिचित सी नजर आती है! इस के अतिरिक्त विशेष विचारणीय विषय तो यह है कि जिस का सम्पूर्ण धार्मिक साहित्य इसी भाषा में उपलब्ध होता है और जिसके नित्य नैमितिक धार्मिक कृत्यों को इसी भाषा में संगृहीत किया गया हो वह जैनसमाज भी इस से प्रायः अपरिचित सा ही नजर आता है! यदि जैनगृहस्थ और विशेष कर जैनभिक्षुवर्ग अपने सम्भाषण में अधिक से अधिक, इस भाषा का उपयोग करने लग जावे तब भी जनता में इस के विकास की अधिक सम्भावना हो सकती है।

मेरा तो प्रत्येक सुज्ञ व्यक्ति से यही साग्रह निवेदन है कि वह भारतीय अन्य साहित्य के रसास्वाद के साथ २ प्राकृत साहित्य के रसपान की भी अपने मन में पर्याप्त लालसा रखे, ताकि भारत वर्ष का छिपा हुआ धार्मिक और ऐतिहासिक गौरव फिर से प्रकाश में आजावे। यह भाषा ललित और मधुर होने के अतिरिक्त क्लिष्टता से भी रहित है! एवं इस के सम्बन्ध में कतिपय विद्वानों का तो यह मत है— [ जोकि सत्य ही है ] यह भाषा सर्व भाषाओं से प्राचीन, सर्वांग सम्पूर्ण और आर्यावर्त की एक विशिष्ट सम्पत्ति है! इस लिए वर्तमान समय के विद्वानों को इस भाषा को हर प्रकार से अपनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

यहां पर इतना लिख देना भी समुचित ही होगा कि इस पुस्तक के निर्माण में मेरे शिष्यरत्न, संस्कृत प्राकृत विशारद पंडित हेमचन्द्र की संशोधनादि के कार्य में मेरे को अधिक से अधिक सहायता मिली है अतः मैं उन का उत्तरोत्तर अभ्युदय चाहता हूं।

वि०—जैनमुनि आत्माराम

[द्वि० भाद्रपद शुक्ला ११ शनिवार सं० १९९३, रावलपिंडी।]



# प्राकृत बालमनोरमा



नमोऽत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स ।

## अथ स्वराः

* औदन्ताः स्वराः ॥ १ । १ । ६ ॥

औकारावसान वर्णाः स्वरसञ्ज्ञाः स्युः ।

यथा—अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ ॥६॥

कादिर्व्यञ्जनम् ॥ १ । १ । १० ॥

कादिर्वर्णो हपर्यन्तो व्यञ्जनं स्यात् ।

यथा—क ख ग घ ङ । च छ ज झ ञ । ट ठ ड ढ ण । त थ द ध न । प फ ब भ म । य र ल व । श ष स ह इति ।

पञ्चको वर्गः ॥ १ । १ । १२ ॥

कादिषु वर्णेषु योयः पञ्च संख्या परिमाणोवर्णः स स वर्गः स्यात् । यथा—

---

* सिद्ध हेम व्याकरण ।

कवर्ग—क ख ग घ ङ ।

चवर्ग—च छ ज झ ञ ।

टवर्ग—ट ठ ड ढ ण ।

तवर्ग—त थ द ध न ।

पवर्ग—प फ ब भ म ।

आद्य-द्वितीय-शषसा अघोषाः ॥ १ । १ । १३ ॥

वर्गाणा माद्य द्वितीया वर्णाः शषसाश्चाऽघोषाःस्युः ।

क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, श ष स इनकी अघोष सञ्ज्ञा है।

अन्यो घोषवान् ॥ १ । १ । १६ ॥

अघोषेभ्योऽन्यः कादिर्वर्णो घोषवान् स्यात् ।

ग घ ङ, ज झ ञ, ड ढ ण, द ध न, ब भ म, य र ल व ह इनको घोष कहते हैं।

य र ल वा अन्तस्थाः ।

एते अन्तस्थाः स्युः ।

य र ल व इनकी अन्तस्थ संज्ञा है।

अं अः ≍क ≍प श ष साः शिट् ॥ १ । १ । १६ ॥

अ क प उच्चारणार्थाः अनुस्वार विसर्गौ वज्र गज कुम्भाऽऽकृती च वर्णौ, शषसाश्च शिटःस्युः ।

अं अः इत्यादि उक्त वर्णों की शिट् संज्ञा है।

## प्राकृत स्वर

अ आ इ ई उ ऊ ए ओ †।

## प्राकृत व्यञ्जन *

क ख ग घ ङ‡ च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण,



---

† प्राकृत भाषा में किसी २ स्थान पर ऐकार और औकार का प्रयोग भी किया जाता है। यथा कैयवं-कौरवा इत्यादि।

* प्राकृत भाषा में व्यञ्जन नहीं लिखा जाता है। यथा—फलम्, मूलम् किन्तु फलं मूलं ऐसे लिखा जाता है। व्यञ्जन उसे कहते हैं, जिसमें स्वर न मिला हुआ होवे। यथा -क् ख् इत्यादि।

‡ प्राकृत भाषा में यद्यपि ङ् और ञ् का स्वतन्त्र प्रयोग नहीं होता तो भी स्व वर्गीय वर्णों के संयोग में इनका प्रयोग किया जाता है। जैसे—[ मङ्गलं, सञ्ज्ञा ] इस लिए इनका व्यञ्जनों में उल्लेख किया है। श ष के स्थान पर प्राकृत भाषा में तो केवल दन्ति सकार ही प्रयुक्त होता है, किन्तु मागधी भाषा में श और ष का प्रयोग भी देखा जाता है। एवं प्राकृत भाषा में ऐ और ऋ ॠ ऌ ॡ अः इन वर्णों का प्रयोग नहीं होता किन्तु इनके स्थान पर जिन इकारादि वर्णों का आदेश होता है, वे आगे यथा स्थान दिखलाए जाँयगे।

# प्रथम पाठ

## अकारान्त प्रयोग

त्+अ=त

अरिहन्त, हर, बुद्ध, मग्ग उवज्झाय, कलह, हत्थ, चाय, भार, आयरिय, वाल, सिद्ध, निव पुरिस. आइच्च, इन्द चन्द, भारवाह, समुद्दकरण, महावीर, जिण, जय, गय, सीह, सियाल, वसह, हव्ववाह, ओट्ठ, दंत, कुंभार, कोह, लोह, दोस, राग, धम्म, वग्घ ।

| | |
|---|---|
| अरि हंतो सव्व जीवाणं परम हिएसी भवइ । | अरिहंत सर्व जीवों के परम हितैषी हैं । |
| अरहंतो सव्व जीवाणं पूयणारिहे भवइ । | अर्हन्त सर्व जीवों के पूजनीय-पूजने योग्य हैं । |
| अरु हंतो जम्म मरणस्स चक्काओ पिहु भवइ । | अरुहन्त जन्म मरण के चक्र से पृथक हैं । |
| हरो रुद्दस्स अवरं नामऽत्थि | हर यह रुद्र का अपरनाम है |
| बुद्धो वि ईसरं सिट्ठी कत्तारं न मण्णई । | बुद्ध भी ईश्वर को सृष्टिकर्त्ता नहीं मानता है । |
| मग्गस्स परिक्खा करियव्वा । | मार्ग की परीक्षा करनी चाहिये । |
| उवज्झाओ सत्थं भणावेइ | उपाध्याय शास्त्र पढ़ाता है । |
| कलहो न करणिज्जो । | कलह न करना चाहिये । |

| | |
|---|---|
| हत्थ पाआ वुसियव्वा। | हाथ और पैर वश में रखने चाहिये। |
| पसूण उवरि अइभारो न आरो वणिज्जो। | पशुओं के ऊपर अति भार न रखना चाहिये। |
| आयरियो संघस्स रक्खणट्ठं एवं वयइ। | आचार्य संघ की रक्षाके लिए ऐसे कहते हैं। |
| वालो भणइ। | वालक पढ़ता है। |
| सिद्धो परम सुही होइ। | सिद्ध परम सुखी होता है। |
| निवो, धम्मं सुणेइ। | नृप राजा धर्मको सुनता है। |
| पुरिसो आसस्स परिक्खंकरेइ | पुरुष-अश्व घोड़े की परीक्षा करता है। |
| आइच्चो पयासइ। | आदित्य सूर्य प्रकाश करता है |
| इंदो आगच्छइ। | इन्द्र आता है। |
| चंदो उदेइ। | चन्द्रमा उदय होता है। |
| भारवाहो भारं वहेइ। | भारवाहक भार को उठाता है |
| समुद्दो अइगंभीरो होइ। | समुद्र अति गम्भीर होता है। |
| महावीर जिणो उवदेसइ। | महावीर जिन उपदेश देते हैं |
| गयो जयं पावेइ। | हाथी जय पाता है। |
| सीहो गज्जइ। | सिंह गर्जता है। |
| सियालो पलायेइ। | सियाल-गीदड़ भागता है। |
| वसहो ढक्कइ। | वृषभ-बैल बोलता है। |
| हव्ववाहो जलइ। | हव्यवाह [अग्नि] जलता है |

| | |
|---|---|
| ओट्ठदंताणं परोप्परं संबंधो अत्थि। | ओष्ठ-होंठ और दांतों का परस्पर सम्बन्ध है। |
| कुंभारो घडं घडइ। | कुम्भार घड़े को बनाता है। |
| कोहो बुद्धिं नासेइ। | क्रोध बुद्धि का नाश करता है |
| लोहो पावस्स मूलमत्थि। | लोभ पाप का मूल है। |
| दोसाउ वेरं वड्ढइ। | द्वेष से वैर बढ़ता है। |
| रागो कम्माणं बंधणं करेइ। | राग कर्मों का बन्धन करता है |
| रागे दुविहे पण्णत्ते। | राग दो प्रकार से वर्णन किया है। |
| पसत्थो अपसत्थो अ। | प्रशस्त और अप्रशस्त (राग) |
| धम्मस्स रागो पसत्थो अत्थि। | धर्म का राग प्रशस्त है। |
| विसयस्स रागो अपसत्थो अत्थि। | विषय का राग अप्रशस्त है। |
| वग्घो धावेइ। | व्याघ्र भागता है। |

इसी प्रकार अन्य अकारान्त शब्दों के रूप भी प्राकृत बना लेने चाहिए।

# द्वितीय पाठ

अब इस द्वितीय पाठ में सदा व्यवहार में आने वाले आवश्यक शब्दों का संग्रह दिया जाता है। प्राकृत के जिज्ञासुओं को यह शब्द संग्रह कण्ठस्थ कर लेना चाहिये।

---

नयण—नयन—आंख
मत्थय—मस्तक
नाण—ज्ञान
वेर—वैर
वयण—वचन
वयण—वदन—मुख
णयर, णगर / नयर, नगर —नगर शहर
सिंग—शृङ्ग
फल—फल
मंस—मांस
भायण—भाजन
भाण—पात्र
मंगल—मङ्गल
हियय—हृदय
मुह—मुख
पित्त—पित्त

पुच्छ—पूंछ
पिच्छ—पङ्ख, मोरपिच्छ
वण—वन
भय—भय
चम्म—चाम
पास—पास (समीप)
गल—गला, कंठ (गर्दन)
अजिण—अजिन, चाम
अम्ब—आम
घड—घट, घड़ा
पडह—ढोल
मोह—मोह
सद्द—शब्द
मढ—मठ
कुढार—कुहाड़ा
समण—श्रमण, साधु
घर, गिह—गृह

कज्ज—कार्य
भड—सुभट, शूर
काय—काय, शरीर
हरिस—हर्ष
सढ—शठ, धूर्त
पाढ—पाठ
मोक्ख—मोक्ष
वेय—वेद
गरुल—गरुड
खार—क्षार
खंध—स्कन्ध
खय—क्षय
पाण—प्राण, जीव
काम—काम, इच्छा
जल—जल
गीत—गीत
फास—स्पर्श
तलाय—तालाब
छार—भस्म
पोक्खर—तालाब
कोस—कोस, कोष
गन्ध—गंध

अप्पा—[ण]—आत्मा
रयय—रजत
मित्त मित्र
दुक्ख, दुह—दुःख
चारित्त—चारित्र
गुत्त गोत्र
पंजरा—पिञ्जरा
लावण्ण—लावण्य' कान्ति
रुप्प—चान्दी
घाण—नाक
पद—पाद
लक्खण, लच्छण—लक्षण
पुट्ठ पुष्ट
सुक्ख, सुख, सुह—सुख
सीस शीर्ष, मस्तक
गहण—ग्रहण
सील—शील, सदाचार
रसायल—रसातल, पाताल
कम्म—कर्म
सयढ—शकट, गाड़ा
खीर—दूध
मूढ—मूढ

| | |
|---|---|
| संजय—संयत | पंढित—पण्डित |
| पंडिय—पण्डित | धम्म—धर्म |
| दुल्लह—दुर्लभ | नर—नर |
| संजम—संयम | अत्थ—अर्थ, धन |



## आकारान्त प्रयोग

प्+आ=पा।

हा हा, सोमपा, खीरपा।

| | |
|---|---|
| हाहा नाम देवा नच्चंति | हाहा नाम वाले देवता नाचते हैं। |
| सोमपा सोमं पिबंति | सोमपा सोम को पीते हैं। |
| खीरपा वाला कीलंति | दूध पीने वाले बालक खेलते हैं |
| गोपा धेणूओ दोहंति | ग्वाले गौओं को दोहते हैं। |

अन्य भी आकारान्त शब्द इसी प्रकार जान लेने चाहिये



| | |
|---|---|
| कुल वई भणेइ | कुलपति कहता है |
| सेट्ठी धम्मं करेइ | सेठ धर्म को करता है |
| अभोगी मोक्खं गच्छइ | त्यागी मोक्ष में जाता है |
| सउणी उड्डेइ | पक्षी उड़ता है |
| भूवई सासणं करेइ | राजा शासन करता है |
| कोही कोहं करेइ | क्रोधी क्रोध करता है |
| मोही मुज्झइ | मोही मोह को प्राप्त होता है |
| भोगी भोगे चयइ | भोगी भोगों को छोड़ता है |
| नर वई आणं करेइ | नरपति–राजा आज्ञा करता है |
| उदहिं तरइ | समुद्र को तैरता है |
| हत्थि सीहाओ पलायइ | हाथी सिंह से भागता है |
| पक्खी उड्डेइ | पक्षी उड़ता है |
| सोमित्ती रामेण सद्धिं गच्छइ | लक्ष्मण रामचन्द्र के साथ जाता है |
| गिरि उवरि मेहो दीसेइ | पर्वत पर से बादल दीखता है |
| घरवई गिहं रक्खेइ | घर का स्वामी घर की रक्षा करता है |
| अमुणी दुक्खं पावेइ | असाधु दुःख पाता है |

इसी प्रकार अन्य इकारान्त शब्दों के वाक्य भी बना लेने चाहिये।

अन्य इकारान्त शब्द जैसे—

अग्गि – आग
गिहि – गृहस्थ
महेसि – महर्षि
कवि कवि
गणि – आचार्य
मणि – मणि – मणिरत्न
रायरिसि – राजर्षि
कपि – वानर
चाइ – त्यागी
पाणि – हाथ
बंभयारी ब्रह्मचारी
वणप्फइ, वणस्सइ – वनस्पति

दहि – दधि
नमि – नमि – राजर्षि
पाणि – प्राणी
मेहावि – बुद्धिमान्
विज्जत्थि } विद्यार्थी
विज्जट्ठि
अच्छि } अक्षी आंख
अक्खि
अट्ठि – अस्थि – हाड
सुहि – सुखी – सुद – पवित्र
सुगन्धि – सुगन्ध वाला पदार्थ

| | |
|---|---|
| नारी धम्मं सुणेइ | नारी धर्म को सुनती है |
| पत्ती, पइव्वय धम्मं पालेइ | पत्नी पतिव्रतधर्मका पालन करती है |
| पवी उदियो भवित्ता अंधकारं पणासेइ | सूर्य उदय होकर अन्धकार का नाश करता है। |
| पहीपुरिसो वक्खाणं करेइ | प्रधी—बुद्धिमान् पुरुष व्याख्यान करता है। |
| गामणी गामं गच्छइ | ग्राम का नेता ग्राम को जाता है। |
| सुसिरी दाणं देई | सुश्री धनवान् दान देता है। |
| थी धम्मं कुणइ | स्त्री धर्म को करती है। |
| इत्थी धम्मं सुणावेइ | स्त्री धर्म को सुनाती हैं। |

प्रत्येक विद्यार्थी को योग्य है कि वह प्राकृत के रूपों की इसी क्रम से रचना करने का स्वयं भी अभ्यास करे और पूर्वोक्त रूपों को कण्ठस्थ करके परस्पर सम्भाषण करने का भी अभ्यास करे।

| | |
|---|---|
| विण्हुणो लोआ उवासणं करेंति | विष्णु की लोग उपासना करते हैं |
| चक्खुणा जणा पस्संति | आंख से लोग देखते हैं। |
| गुरुणा भासियं | गुरु ने भाषण किया। |
| वाहुणो वलं दंसइ | भुजा का बल दिखाता है। |
| कुंथू न दीसेइ | कुंथु दिखाई नहीं देता है। |
| कुंथू अइसुहुमो जीवो होइ | कुंथु अति सूक्ष्म जीव होता है। |
| सो मंतुं सहेइ | वह अपराध को सहन करता है। |
| विंदु समं जीवणं अत्थि | विन्दु के समान जीवन है। |
| वाऊ चलेइ | वायु चलता है। |
| भिक्खू भिक्खट्ठं गच्छइ | भिक्षु भिक्षा के लिए जाता है। |
| सयंभुणा कडे लोए एवं केवि मरणंते | स्वयम्भु ने इस लोक का निर्माण किया है। इस प्रकार कितने एक मानते हैं। |
| तरुणो छाया सीयला अत्थि | वृक्ष की छाया शीतल है। |
| विहुणो चँदिमा सुहकरा भवइ | चांद की चान्दनी सुखकर होती है |
| जंवू वच्छो फलं देइ | जम्बू वृक्ष फल देता है। |
| पहुणो वंदियव्वा हुँति | प्रभु वन्दनीक होते हैं। |
| तंतूहिं वत्थो भवइ | तन्तुओं से वस्त्र वनता है। |
| पसु धम्मं चईऊण पुरिसधम्मो गिण्हियव्वो | पशु धर्म को छोड़कर पुरुष धर्म को ग्रहण करना चाहिए। |

# पञ्चम पाठ

पाठकों को यह स्मरण रहे कि प्राकृत भाषा में वास्तव में ऋकारान्त शब्द नहीं रहता हैं । किन्तु ऋकार को अकार इकार, उकार, आदेश हो जाते हैं । जिनका क्रमशः उल्लेख आगे किया जाता है ।

(क) ऐसे शब्द जिनमें ऋकार को अकार आदेश होता है।

घृत — घय । तृण — तण । वृषभ—वसह । कृत — कय। मृग — मय । घृष्ट—घट्ठो इत्यादि अकारा आदेश वाले शब्द हैं। और कहीं २ पर ऋकार को आकार का आदेश भी हो जाता है। जैसे कि – कृश—कास। मृदुक—माउक्क इत्यादि।

( ख ) इकार आदेश वाले शब्द—

सृष्टि–सिट्ठि। कृपा—किवा। कृपण – किवण । भृगु—भिउ। नृप निव । समृद्धि—समिद्धि । श्रृङ्गार—सिंगार। मृष्ट—मिट्ठ। भृङ्ग—भिंग। ऋषि इसि। कृति—किइ। दृष्टि—दिट्ठि । श्रृगाल—सियाल । घृणा—घिणा । धृति – धिइ। कृपाण—किवाण। वृत्ति–वित्ति। सकृत् – सई । हृत—हिय इत्यादि शब्दों में ऋकार को इकारादेश हुआ है ।

( ग ) उकारा देश वाले शब्द—

| | |
|---|---|
| भवयाणं किवा दिट्ठी अत्थि किं? | क्या आपकी कृपादृष्टि है। |
| किवणो दाणं न देइ | कृपण दान नहीं देता। |
| इसी सत्थं भणावेइ | ऋषि शास्त्र को पढाता है। |
| विद्ध कइणो कहयंति- | वृद्ध कवि कहते हैं— |
| धिई न जहियव्वो | धृति (धैर्य्य) न छोडनी चाहिए। |
| सियालो सीहाओ वीहेइ | गीदड सिंह से डरता है। |

इत्यादि इकारा आदेश वाले ऋकार के वाक्य जान लेने चाहिए॥

उकारादेशवाले शब्दों के वाक्य—

| | |
|---|---|
| उसभं वन्दे | ऋषभदेव को वन्दना करता हूं। |
| उऊ परिवट्टइ | ऋतु बदलता है। |
| मुसावायो जहिअव्वो | मृषावाद को छोडना चाहिए। |
| सो पाहुडं देइ | वह प्राभृत देता है। |
| भिऊ रिसी कासो दीसइ | भृगु ऋषि कृश दीखता है। |
| वुड्ढ सावगा धम्मं चरंति | वृद्ध श्रावक धर्म का आचरण करते है |
| सव्व धम्माणं मूलं मोसावायस्स चायोऽत्थि | सर्व धर्मों का मूल मृषावाद का त्याग है। |

इत्यादि, उकार आदेश वाले ऋकार के प्रयोग हैं। रिकार आदेश वाले ऋकार के प्रयोग जैसेः—

# छठा पाठ

## शब्द संग्रह

| | |
|---|---|
| धवल—धवल, सुफेद | लोह—लोभ |
| गुड, गुल—गुड़ | अंब—आम्र |
| कयली, केली—कदली, केला | आइच्च—आदित्य, सूर्य |
| अहिनव—अभिनव | आरिय आर्य |
| अग्गि—अग्नि, आग | आसाढ—आषाढ़ |
| अय—लोहा | उच्छाह उत्साह |
| समण—श्रमण, साधु | आयरिय—आचार्य |
| माधव - कृष्ण | आस—अश्व, घोड़ा |
| सूई—सूची, सूई | आहार आधार, भोजन |
| नयर—नगर | उदहि - उदधि, समुद्र |
| अक्क—अर्क, सूर्य | उवज्झाय—उपाध्याय |
| अप्प, अप्पाण - आत्मा | |

प्राकृत भाषा में ए ओ यह दोनों स्वर तो होते हैं, किन्तु एकारान्त और ओकारान्त प्रयोग देखने में प्रायः नहीं आते, क्योंकि एकारान्त और ओकारान्त शब्द विभक्ति के लगने से उसी रूप में नहीं रह सकते। यदि कदाचित एकारान्त और

ओकारान्त शब्दों का वाक्य में प्रयोग आ भी जाय, तो वहां सन्धि नहीं होती जैसे—

अम्हे—एत्थ अहो—अच्छरियं इत्यादि।

यहां पर सन्धि प्राप्त होने पर भी सन्धि कार्य नहीं हुआ तथा एकारान्त और ओकारान्त शब्द निपात या अव्यय भी होते हैं। अब इस स्थान पर ऐसे शब्दों को संगृहीत किया जाता है जिनके आदि में एकार या ओकार है।

ए— अव्यय है—सम्बोधन और निश्चय अर्थ में आता है।

एगजडि—एक जटावाला नाग।

एकल्ल विहारी— अकेला ही विहार करने वाला, साधु।

एकारसंग—ग्यारह अङ्ग—आचाराङ्गादि ११ अङ्ग शास्त्र।

एकासन— एकाशन तप— दिन में एकबार ही खाना।

एग साडिय—एक पूर्ण वस्त्र— जो सन्धि से रहित हो।

एगवादी— एक आत्मा का मानने वाला (वेदान्ती)

एगंत—एकान्त।

एगंत दंड— एकान्त रूप से दंड भोगने योग्य (हिंसक)।

एगंत दिट्ठि— एकान्त दृष्टि।

एगंत चारि— एकान्त चारी।

एगंत खुर—एक खुर वाला पशु घोड़ा, गधा आदि।

एगंत सुत्त— एकान्त सुप्त, मिथ्यादृष्टि।

एग नयण—एक नेत्र, काणा, एक आंख वाला।

एगगम—एकाग्र, एक मन होके मोक्ष जाने वाला।

एगनाणि—केवल ज्ञानी। एगपक्ख—एक पक्ष।
एग पक्त्त—एक पत्र।
एग पक्खिय—एक गुरु के शिष्य।
एग रूप—एक रूप हो जाना।
एग साल—एक मजला मकान। एगाहिय—नित्य का ज्वर।
एगेन्दिय—एकेन्द्रिय जीव। एत्थ—यहां पर। एलग—मींढा
एलमूयत्त—बकरे की तरह अव्यक्त वाणी के बोलने वाला।
एसज्ज—ऐश्वर्य। एषणा समिइ—एषणा समिति—निर्दोष आहार पानीग्रहण करना। एसि—एषणा करने वाला। एहा—समिधा, इन्धन। एहिय—इस लोक सम्बन्धी कार्य। एवंपि—इसी प्रकार। एवमाइ—इत्यादि। एरावण शकेन्द्र का मुख्य हाथी। एरावई—ऐरावती, इस नाम वाली नदी (रावी) इत्यादि।

ओकारादि शब्दः—

ओ—अव्यय पादपूर्त्ति अर्थ में है।

ओ अंसि ओजस्वी—धैर्य वाला। ओअरिय—औदरिक—उदर के भरने वाला। ओआर—अवतार। ओंकार ओङ्कार शब्द। ओआस—अवकाश, तथा खुली भूमिका। ओघसण्णा—सामान्य बोध। ओ चूलअ—घोड़े की लगाम। ओच्छाइय—ढका हुआ। ओज—शक्ति। ओट्ट होठ। ओदण—चावल। ओधारिणी—निश्चयकारी भाषा। ओभावणा उपहास्य। ओम ऊणा—न्यून—अधूरा। ओमंथिअ—नीचा मस्तक कर

ओकारान्त शब्दों का वाक्य में प्रयोग आ भी जाय, तो वहां सन्धि नहीं होती जैसे—

अम्हे—एत्थ अहो—अच्चरियं इत्यादि।

यहां पर सन्धि प्राप्त होने पर भी सन्धि कार्य नहीं हुआ तथा एकारान्त और ओकारान्त शब्द निपात वा अव्यय भी होते हैं। अब इस स्थान पर ऐसे शब्दों को संगृहीत किया जाता है जिनके आदि में एकार या ओकार है।

ए— अव्यय है—सम्बोधन और निश्चय अर्थ में आता है।

एकजडि—एक जटावाला तारा।

एकल विहारी—अकेला ही विहार करने वाला, साधु।

एकारसंग—ग्यारह अङ्ग—आचाराङ्गादि ११ अङ्ग शास्त्र।

एकासन—एकाशन तप—दिन में एकबार ही खाना।

एक साडिय—एक पूर्ण वस्त्र—जो सन्धि से रहित हो।

एगावादी—एक आत्मा का मानने वाला (वेदान्ती)

एगंत—एकान्त।

एगंत दंड—एकान्त रूप से दंड भोगने योग्य (हिंसक)।

एगंत दिट्ठि—एकान्त दृष्टि।

एगंत वादि—एकान्त वादी।

एगंत खुर—एक खुर वाला पशु घोड़ा, गधा आदि।

एगंत मूढ—एकान्त मूढ, मिथ्यादृष्टि।

एग नयन—एक चक्षु, काणा, एक आंख वाला।

एगभव—एकाभव, एक भव लेके मोक्ष जाने वाला।

एगनाणि—केवल ज्ञानी। एगपक्ख—एक पक्ष।
एग पक्त्त—एक पत्र।
एग पक्खिय—एक गुरु के शिष्य।
एग रूप—एक रूप हो जाना।
एग साल—एक मजंला मकान। एगाहिय—नित्य का ज्वर।
एगेन्दिय—एकेन्द्रिय जीव। एत्थ—यहां पर। एलग—मींढा
एलमूयत्त—बकरे की तरह अव्यक्त वाणी के बोलने वाला।
एसज्ज-ऐश्वर्य। एषणा समिइ-एषणा समिति-निर्दोष आहार पानीग्रहण करना। एसि—एषणा करने वाला। एहा—समिधा, इन्धन। एहिय—इस लोक सम्बन्धी कार्य। एवंपि—इसी प्रकार। एवमाइ—इत्यादि। एरावण शकेन्द्र का मुख्य हाथी। एरावई—ऐरावती, इस नाम वाली नदी (रावी) इत्यादि।

ओकारादि शब्दः—

ओ—अव्यय पादपूर्त्ति अर्थ में है।
ओ अंसि ओजस्वी—धैर्य वाला। ओअरिय—औदरिक—उदर के भरने वाला। ओआर—अवतार। ओंकार ओङ्कार शब्द। ओआस-अवकाश, तथा खुली भूमिका। ओघसण्णा—सामान्य बोध। ओ चूलअ—घोड़े की लगाम। ओच्छाइय—ढका हुआ। ओज—शक्ति। ओट्ठ होठ। ओदण—चावल। ओधारिणी-निश्चयकारी भाषा। ओभावणा उपहास्य। ओम ऊणा-न्यून—अधूरा। ओमंथिअ—नीचा मस्तक कर

ओकारान्त शब्दों का वाक्य में प्रयोग आ भी जाय, तो वहां सन्धि नहीं होती जैसे—

अम्हे—एत्थ— अहो—अच्चरियं इत्यादि।

यहां पर सन्धि प्राप्त होने पर भी सन्धि कार्य नहीं हुआ तथा एकारान्त और ओकारान्त शब्द निपात वा अव्यय भी होते हैं। अब इस स्थान पर ऐसे शब्दों को संगृहीत किया जाता है जिनके आदि में एकार या ओकार है।

ए—अव्यय है—सम्बोधन और निश्चय अर्थ में आता है।

एकजडि—एक जटावाला तारा।

एकल विहारी—अकेला ही विहार करने वाला, साधु।

एकारसंग—ग्यारह अङ्ग—आचाराङ्गादि ११ अङ्ग शास्त्र।

एकासन—एकाशन तप— दिन में एकबार ही खाना।

एक साडिय—एक पूर्ण वस्त्र—जो सन्धि से रहित हो।

एकावादी—एक आत्मा का मानने वाला (वेदान्ती)

एगंत—एकान्त।

एगंत दंड—एकान्त रूप से दंड भोगने योग्य (हिंसक)।

एगंत दिट्ठि—एकान्त दृष्टि।

एगंत चारि—एकान्त वासी।

एगंत खुर—एक खुर वाला पशु घोड़ा, गधा आदि।

एगंत सुत्त—एकान्त सुप्त, मिथ्यादृष्टि।

एग चक्खू—एक चक्षु, काणा, एक आंख वाला।

एगच्च—एकार्च, एक भव लेके मोक्ष जाने वाला।

एगनाणि—केवल ज्ञानी। एगपक्ख—एक पक्ष।
एग पक्त्त—एक पत्र।
एग पक्खिय—एक गुरु के शिष्य।
एग रूप—एक रूप हो जाना।
एग साल—एक मंजला मकान। एगाहिय—नित्य का ज्वर।
एगेन्दिय—एकेन्द्रिय जीव। एत्थ—यहां पर। एलग—मींढा
एलमूयत्त—बकरे की तरह अव्यक्त वाणी के बोलने वाला।
एसज्ज-ऐश्वर्य। एषणा समिइ-एषणा समिति-निर्दोष आहार पानीग्रहण करना। एसि—एषणा करने वाला। एहा—समिधा, इन्धन। एहिय—इस लोक सम्बन्धी कार्य। एवंपि—इसी प्रकार। एवमाइ—इत्यादि। एरावण शकेन्द्र का मुख्य हाथी। एरावई—ऐरावती, इस नाम वाली नदी (रावी) इत्यादि।

ओकारादि शब्दः—

ओ—अव्यय पादपूर्त्ति अर्थ में है।
ओ अंसि ओजस्वी—धैर्य वाला। ओअरिय—औदरिक—उदर के भरने वाला। ओआर—अवतार। ओंकार ओङ्कार शब्द। ओआस-अवकाश, तथा खुली भूमिका। ओघसण्णा—सामान्य बोध। ओ चूलअ—घोड़े की लगाम। ओच्छाइय—ढका हुआ। ओज—शक्ति। ओट्ठ होठ। ओदण—चावल। ओधारिणी—निश्चयकारी भाषा। ओभावणा उपहास्य ओम ऊणा—न्यून—अधूरा। ओमंथिअ—नीचा

के बैठने वाला । ओम चेलग—मैले और पुराने वस्त्रों के पहिरने वाला। ओमाण—अपमान । ओमुय—जलता हुआ अङ्गार (कोयला) । ओरस—पुत्र । ओरोह—अन्तःपुर, स्त्रियों का स्थान। ओलम्ब-नीचे लटकना। ओलम्बणदीव – साङ्कल से बन्धा हुआ दीपक, अथवा लालटैन। ओलग्ग—बीमार । ओवगारिअ- उपकार करने वाला । ओवत्थाणिय—सभा का नौकर। ओवाय—उपाय। ओवीलग—दूसरे को निर्लज्ज करने वाला । ओवेहा - उपेक्षा। ओस—ओस, अवश्याय । ओसण्णं—प्रायः करके । ओसहि—औषधि । ओसाण—अवसान, समीप । ओसायण-नाश करना । ओसास - उच्छ्वास । ओसित्त—सिञ्चित किया हुआ । उस्सुय—उत्सुकता, उत्कण्ठा । ओसोवणी-गाढ़ीनिद्रा । इत्यादि।

इन शब्दों के प्राकृत वाक्य स्वयं बना लेने चाहिए यथा-

एगन्तेण तवजुत्तो भवित्तापुणो ओआसे चिट्ठियव्वो एकान्त तपयुक्त होकर फिर अवकाश में रहना चाहिए इत्यादि ॥

अब अनुस्वार युक्त शब्दों का उल्लेख किया जाता है। यथा—

अंक रत्न, या गोद । अंकधर - चन्द्रमा । अंकधाई—अङ्क में लेकर बालक को क्रीड़ा कराने वाली धाई । अंक मुह —पद्मासन का मुख्य भाग । अंकिल्ल (देशीय प्रा०)

नट—नाचने वाला । अंकुडग—कीला । अंकुस, अङ्कुश—हाथी को वश में करने वाला । अंकेल्लुण—घोड़े को मारने वाला चाबुक । अंग—शरीर का अवयव । अंग जणवय—अङ्ग जनपद-देश । अंगण शाला आदि के आगे का भाग, आङ्गन (वेड़ा) खुली भूमिका । अंगणा—स्त्री । अंग पडियारिया—सेवा करने वाली दासी । अंगप्फुरणा—अङ्ग स्फुरणा । अंग भंजण—अंगड़ाई, सो कर उठने पर अङ्ग मर्दन करना । अंग मंग—अङ्ग उपाङ्ग । अंग रक्ख—अङ्ग की रक्षा करने वाला । अङ्ग रंग—अंग पर मलने वाला पदार्थ, जैसे चन्दन आदि । अंग रुह—पुत्र । अंगरूहा—पुत्री । अंग विज्जा—अङ्गविद्या, अङ्ग स्फुरण के सम्बन्ध में कहने वाला शास्त्र । अंग संचाल—अङ्ग का सञ्चालन । अंगदाण—पुरुष चिह्न, लिङ्ग । अंगाल—कोयला । अंगुली कोस—अंगूठी । अंगुलि—अङ्गुलि । अंकछण—खींचना । अंजण—रसाञ्जनादि अंजन । अंजलिप्पगह—हाथ जोड़ कर नमस्कार करना । अंतकम्म—वस्त्र का किनारा । अंतकरण—नाश करने वाला । अंतकाल—मरणकाल । अंतद्धाण—अदृश्य होजाना । अंतद्धाणिया—अदृश्य हो जाने की विद्या । अंतपाल—सीमा का रक्षक पुरुष । अंतमुहुत्त मुहूर्त्त के भीतर का समय । अंतर—अन्तर, व्यवधान । अंतरंग—अन्तःकरण गुह । अंतरप्प—अन्तरात्मा । अंतरभाव परमार्थ । अतंर सत्तु—अन्तरङ्ग शत्रु काम क्रोधादि । अंतरावास—विश्राम लेते हुए

पथ में गमन करना । अंतरिक्ख—अन्तरिक्ष, आकाश । अंतेवासि—शिष्य । अंतो दुट्ठ—भीतर का शल्य । अंदोलग—हिण्डोलना । अंध आंख से रहित । अंबर वत्थ—स्वच्छ वस्त्र । अम्बु—पानी । अंसोत्थ—पीपल का वृक्ष । अकंड—विना समय । अकंपिय—अकम्पित, महावीर स्वामी का आठवां गणधर । इत्यादि अनुस्वार शब्दों का संग्रह है ।

यथास्थान बोलने के लिये सानुस्वार शब्दों का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिए जैसे कि—

अकंतवत्थुं न को वि इच्छइ । अंतकाल समए जीवस्स धम्मो सरणं भवइ । अंतपालो सीमं रक्खइ । अंतरंग सुद्धि-विणा अप्पणोमोक्खो न भवइ । अंतरिक्खे पक्खी उड्डेइ अंतेवासी सुत्तस्स अत्थं पुच्छइ । अंतो दुट्ठ पुरिसो वीसास घायं करेइ । अंधो पायेण निल्लज्जो होइ । अंबर वत्थं पहिरेइ । मूढो अकंतं भासइ । तस्स अंगरुहो विज्जं भणेइ । अंकधरो पयासेइ । अंकि इट्ठो नच्चइ । अंगरक्खो वत्थं परिहावेइ ।



# सातवां पाठ

प्राकृत भाषा में विसर्ग के स्थान पर ओकारादेश हो जाता है। जैसे कि—

सव्वो सर्वतः। पुरओ—पुरतः। अग्गओ अग्रतः। मग्गओ मार्गतः। भवओ—भवतः। भवन्तो—भवन्तः। सन्तो—सन्तः। कुओ—कुतः। पुणो—पुनः इत्यादि।

तथा प्रथमा विभक्ति के एकवचन में भी एकार और ओकार आदेश होता है। जैसे कि—

धम्मे, धम्मो, जिणे, जिणो, वीरे, वीरो इत्यादि।

इन शब्दों के प्रयोग भी स्वयं बना लेने चाहिए यथा

सव्वओ पासइ। पुरओ गच्छइ। अग्गओ पेहेइ। मग्गओ आगच्छइ। भवओ किवा दिट्ठी। भवन्तो किं कहेंति। तं कुओ आगच्छसि।

तथा प्राकृत भाषा में स्वरों को स्वर आदेश भी होते हैं जैसे कि—अकार को इकारादेश—

---

१ कहीं २ विसर्ग के स्थान पर एकार और रकारादेश भी हो जाता है। यथा—कतरः गच्छइ। कयरे गच्छइ। पुनः अपि—पुनरापि पुनरपि।

होता है, किन्तु एक वर्ण का लोप होकर शेष रहा हुआ वर्ण द्वित्व हो जाता है, यह बात नीचे लिखे हुए उदाहरणों से समझ लेनी चाहिए।

| संस्कृत | प्राकृत | संस्कृत | प्राकृत |
|---|---|---|---|
| क भुक्तम् | भुत्तं | मुक्तं | मुत्तं |
| ग दुग्धम् | दुद्धं | स्निग्धः | सिणिद्धो |
| ट षट्पदः | छप्पओ | कट्फलम् | कप्फलं |
| ड खड्गः | खग्गो | षड्जः | सज्जो |
| त उत्पलम् | उप्पलं | उत्पातः | उप्पाओ |
| द मुद्गः | मुग्गो | मुद्गरः | मुग्गरो |
| प सुप्तम् | सुत्तम् | पर्याप्तम् | पज्जत्तं |
| र सूत्रम् | सुत्तं | रात्री | रत्ती |
| श निश्चलः | निच्चलो | श्च्योतति | चुयइ |
| ष गोष्ठी | गोट्ठी | निष्ठुरः | निट्ठुरो |
| स स्खलितम् | खलियं | स्नेहः | णेहो |
| म युग्मम् | जुग्गम् | रश्मि | रस्सी |
| न नग्नः | नग्गो | भग्नः | भग्गो |
| य सौम्यः | सोम्मो | वाक्यं | वक्कं |
| ल उल्का | उक्का | वल्कलम् | वक्कलं |
| व श्लक्ष्णम् | सण्हं | विक्लवः | विक्कवो |
| र अर्कः | अक्को | वर्गः | वग्गो |

| | | | |
|---|---|---|---|
| र चक्रम् | चक्कं | ग्रहः | गहो |
| ब्ध लुब्धः | लुद्धो | लुब्धकः | लुद्धओ |
| ब्द शब्दः | सद्दो | अब्दः | अद्दो |

तथा निम्न लिखित शब्दों में भी भिन्न वर्गीय संयुक्त वर्णों में से एक का लोप और तत्स्थानीय द्वित्व विधान स्पष्टतः प्रतीत हो रहा है। जैसे कि—

ष्क पुष्करम् पोक्खरं। स्कः स्कन्धः - खंधो। त्य—सत्यम्, सच्चं। त्वा—ज्ञात्वा, णच्चा। थ्व—पृथ्वी, पिच्छी। द्व—विद्वान्, विज्जं। ध्वा -बुध्वा, बुज्झा। थ्य—पथ्यम्, पच्छं। मिथ्या, मिच्छा। श्च - पश्चिम्, पच्छिमं। त्स—उत्साह, उच्छाहो। ष्प - पुष्पम्, पुप्फं। श्न—प्रश्नः, पण्हो। ष्ण—विष्णु, विण्हु। त्स्न—ज्योत्स्ना, जोण्हा। क्ष्ण—तीक्ष्णम् तिण्हं। श्म -काश्मीरः, कम्हारा। ष्म - ग्रीष्मः, गिम्हो। स्म—अस्मादृशः. अम्हारिसो। ह्म - ब्रह्मा, बम्हा। ह्य सह्यः, सज्झो। र्य—भार्या, भज्जा। न्म - जन्म, जम्मो। ज्ञ ज्ञानम्, णाणं, नाणं। ध्य - उपाध्यायः, उवज्झाओ। द्य—विद्या, विज्जा। क्म—रुक्मं, रुप्प। रुक्मिणी, रुप्पिणी ड्म—कुड्मलम्, कुम्मल। ख्या-व्या-ख्यानम्, वक्खाणं। ष्ट—मुष्टि, मुट्ठी। स्त—हस्तः, हत्था। स्तोकम् - थोयं, थोपं। थोयं थेवं। स्तवः थवो। स्तुति-थुई।

इसी प्रकार अन्य रूप भी जान लेने चाहिए।

# आठवां पाठ

## बारह महीनों के लोकोत्तर-जैनागम प्रसिद्ध नाम



एक संवच्छरस्स बारस मासा पण्णत्ता तं जहा—

एक वर्ष के बारह मास होते हैं तद्यथा—

| | |
|---|---|
| अभिणंदिए—अभिनदित —श्रावण | पइट्ठिय—प्रतितिष्ठ —भाद्रपद |
| विजय—विजय आश्विन | पियवद्धण—प्रीतिवर्द्धन —कार्तिक |
| सेयंसे—श्रेयान —मार्गशीर्ष | सिव—शिव —पौष |
| सिसिरे—शिशर —माघ | हेमन्ते—हिमवान् —फाल्गुन |
| वसन्ते—वसन्त —चैत्र | कुसम संभव—कुसम संभव —वैशाख |
| णिदाह—निदाघ —ज्येष्ठ | वण विरोह—वन विरोध —आषाढ़ |

नोट बारह मासों के लौकिक श्रावण भाद्रपद आदि नाम तो प्रसिद्ध ही हैं परन्तु जैनागमों में इनके जो ऊपर नाम दिए हैं वे लोकोत्तर के नाम से विख्यात हैं।

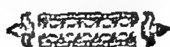
# शब्द संग्रहः

उज्जाण –उद्यान, बाग । उज्जाणगिह–उद्यानगृह, ( कोठी ) । उज्झाण जत्ता–बाग की यात्रा । उज्जाण पाल–माली । उज्जाण साला–उद्यानशाला । उज्जा णालयण–उद्यान में बैठने का गृह । उज्जुवालिया–नदी । उब्बुवर–सूर्य उज्जल–उज्ज्वल । उत्तमंग–मस्तक । उत्तम कहा–उत्तम कथा । उत्तमट्ठाण–उत्तम स्थान । उदग साला–जल का स्थान । अस्स साला–अश्व शाला । उट्ट साला–ऊँट शाला गद्दभ साला–गर्दभ शाला । गोण साला–वृषभ शाला, रह साला–रथ शाला, वानर–बांदर, कइ–कपि, आस –अश्व, घोड़ा, पोत साला–जहाज शाला, जंघा–जांघ, चामर–चमार, चामीकर सुवर्ण, चाय–त्याग, चार पुरिस गुप्तचर ( खुफिया ), चारग साला–जेलखाना चारग पालय–जेलर, वन्दीगृहाध्यक्ष, चारग सोहण–कैदियों को जेल से छोड़ना । चार भड़–सुभट, या चोर' चारिया–परिव्राजिका, साध्वी, चारित्त–चारित्र, चारिय–विज्ञापित. चारु–मनोहर, चारु भासि–मनोहर बोलने वाला चालय–चालनी ( छालनी ), चालण पूर्वपक्ष, चिहुर–

शिकारी जानवर चित्ता आदि, चीणांसुय—चीनांशुक, चीन देश का सूक्ष्म वस्त्र, चीणपिठ्ठ सिन्दूर, चीणविठ्ठ—हिंगुल, चीर—वस्त्र, चुल्लपिउय, पितृव्य—पिता का छोटा भाई, चुल्ल माउया—चाची, मतेरमां, चुल्ली—छोटा चूल्हा, चूड़ामणि—मुकुट, चूयवणं—अम्बों का वन, चूला—शिखा चोटी,



# नवमा पाठ



पहिले के पाठों में प्राकृत भाषा के बहुत से शब्दों का बोध, प्रायः विना विभक्तियों के कराया गया है। अव इस पाठ में कतिपय विभक्तयन्त शब्दों की रूपावली दी जाती है।

साथ ही विद्यार्थियों को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि प्राकृतभाषा में द्विवचन नहीं होता, किन्तु द्विवचन के स्थान पर बहुवचन का प्रयोग किया जाता है और चतुर्थी विभक्ति के स्थान पर भी प्रायः षष्ठी ही होती है। जैसे कि सँस्कृत में—

पुरुषौ वदतः—दो पुरुष बोलते हैं। तो प्राकृत में 'पुरिसा वयंति' तथा दोपुरिसा वयंति, इस प्रकार से उच्चारण किया जावेगा।

तथा 'नमः अर्हद्भ्यः' यहां चतुर्थी के स्थान पर 'नमो अरिहंताणं' इस प्रकार से षष्ठि का प्रयोग किया जाता है।

## शब्द रूपावली

( क ) अकारान्त पुँल्लिङ्ग वीर शब्द—

| | एक वचन | बहु वचन |
|---|---|---|
| १ | वीरो वीरे ( वीरः ) | वीरा ( वीराः ) |
| २ | वीरं ( वीरम् ) | वीरा, वीरे (वीरान्) |

३—वीरेण वीरेणं (वीरेण) वीरेहि, वीरेहिं, वीरेहिं (वीरैः)

४—वीराए, वीराय, वीरस्स, (वीराय) वीराण, वीराणं (वीरेभ्यः)

५ वीरा, वीरत्तो वीराओ, वीराउ, वीराहि, वीराहिंतो (वीरात्) वीरत्तो, वीराओ, वीराउ, वीराहि, वीरेहि, वीराहिंतो, वीरासुंतो वीरे सुंतो (वीरेभ्यः)

६—वीरस्स, (वीरस्य) वीराण, वीराणं (वीराणाम्

७—वीरे, वीरंसि (वीरे) वीरेसुं, वीरेसु (वीरेषु)

सम्बोधन—

हे वीर, वीरो वीरा (वीर) वीरा, (वीराः)

| एक वचन | | बहु वचन | |
|---|---|---|---|
| १—सव्वो सव्वे | (सर्वः) | सव्वे | (सर्वे) |
| २—सव्वं | (सर्वम्) | सव्वे, सव्वा | (सर्वान्) |
| ३—सव्वेण, सव्वेणं | (सर्वेण) | सव्वेहि, सव्वेहिं सव्वेहिं | (सर्वैः) |
| ४—सव्वस्स | (सर्वस्मै) | सव्वेसिं सव्वाण—सव्वाणं | (सर्वेभ्यः) |
| ५—सव्वतो सव्वाओ सव्वाउ सव्वाहि सव्वेहि | | सव्वाहि, सव्वेहि, सव्वाहिंतो सव्वेहिंतो, सव्वासुंतो सव्वाहिंतो सव्वेसुंतो, | |

( सर्वस्मात् ) ( सर्वेभ्यः

६—सव्वस्स, ( सर्वस्य ) सव्वेसिं सव्वाण, सव

( सर्वेषाम्

७—सव्वोसिं सव्वम्मि सव्वत्थ सव्वेसु, सव्वे

( सर्वस्मिन् ) ( सर्वेषु )

सं० हे सव्वा हे सव्वो हे सव्वे

## अकारान्त नपुन्सक वण–[वन] शब्द के रूप

१—वणं ( वनं ) वणाइं, वणाणि, वणाइं (वनानि

२—,, ,, ,, ,, ,,

शेष रूप वीर शब्द की तरह ही होते हैं।

## इकारान्त पुल्लिङ्ग रिसि शब्द

| एक वचन | बहु वचन |
|---|---|
| १—रिसी ( ऋषिः ) | रिसउ, रिसओ, रिसिणो, रिसी ( ऋषयः ) |
| २—रिसिं ( ऋषिम् ) | रिसी, रिसिणो ( ऋषीन् ) |
| ३—रिसिणा ( ऋषिणा) | रिसीहि, रिसीहिं, रिसीहिं ( ऋषिभिः ) |
| ४—रिसिस्स, रिसिणो रिसये—( ऋषये ) | रिसीण, रिसीणं, ( ऋषिभ्यः ) |

५—रिसित्तो, रिसीओ, रिसीउ ॥ रिसित्तो, रिसीओ, रिसीउ
रिसिणो रिसी हिंतो रिसि सुंतो रिसीहिंतो ।
(ऋषेः) (ऋषिभ्यः)

६—रिसिस्स, रिसिणो रिसीण रिसीणं
(ऋषेः) (ऋषीणाम्)

७—रिसिंसि, रिसिम्मि रिसीसु, रिसीसुं.
(ऋषौ) (ऋषिषु)

सम्बोधन

रिसी, (ऋषे) रिसउ, रिसओ, रिसयो, रिसिणो,
रिसी (ऋषयः)

## भाणु [ भानु ] शब्द

१—भणू (भानुः) भाणवो, भाणवे, भाणओ भाणउ
भाणुणो भाणू (भानवः)

२—भणुं (भानुम्) भाणुणो, भाणू (भानून्)

३—भाणुणा (भानुना) भाणूहि, भाणूहिं भाणूहिँ
(भानुभिः)

४—भाणवे, भाणुणो भाणूण, भाणूणं,
भाणुस्स (भानवे) (भानुभ्यः)

५ भाणुत्तो, भाणुओ भाणुउ भाणुत्तो, भाणूओ भाणूउ
भाणुणो, भाणुहिंतो भाणूहिंतो, भाणूसुंतो,
(भानोः) (भानुभ्यः)

६—भाणुस्स, भाणुणो (भानोः) भाणूण, भाणूणं (भानूनाम्)
७—भाणुंसि, भाणुम्मि, (भानौ) भाणून्सु, भाणूसुं (भानुषु)

सम्बोधन

भाणु, भाणू ! (भानो) भाणवो, भाणओ, भाणउ,
भाणुणो भाणू (भानवः)

इकारान्त नपुंसक लिङ्ग दहि [दधि] शब्द के रूप—

१—दहिं (दधि) दहीइं, दहीइं दहीणि (दधीनि)
,, ,, ,, ,,

शेष गिरि शब्द की तरह ही रूप हैं।

उकारान्त नपुंसक लिङ्ग महु [मधु] शब्द के रूप—

महुं (मधु) महूइं, महूइं महूणि (मधूनि)
,, ,, ,, ,,

शेष शब्द भानुवत् जानो।

आकारान्त स्त्रीलिङ्ग माला शब्द के रूप—

| एक वचन | | बहु वचन | |
|---|---|---|---|
| १—माला (माला) | मालाउ | मालाओ, माला | (मालाः) |
| २—मालं (मालाम्) | ,, | ,, | ,, (मालाः) |
| ३—मालाअ | मालाइ, | मालाहि | मालाहिं, |
| मालाए | (मालया) | मालाहिं | (मालाभिः) |
| [illegible] | मालाइ, | मालाएं | मालाण |

मालाए (मालायै) (मालाभ्यः)

५—मालाअ, मालाइ, मालाए मालत्तो, मालातो, मालाओ

मालत्तो, मालत्तो, मालाउ, मालाहिंतो,

मालाओ, मालाउ, मालासुंतो

मालाहिंतो (मालायाः) (मालाभ्यः)

६—मालाअ, मालाइ, मालाए, मालाण मालाणं

(मालायाः) (मालानाम्)

७—मालाअ, मालाइ, मालाए,

(मालायाम्) मालासु, मालासुं, (मालासु)

## सम्बोधन

माला मालाउ, मालाओ, माला,

(माले) (मालाः)

## इकारान्त बुद्धि शब्द [ स्त्री लिङ्ग ]

१—बुद्धी, (बुद्धिः) बुद्धीउ, बुद्धीओ, बुद्धी, (बुद्धयः)

२—बुद्धिं, (बुद्धिम्) ,, ,, ,, (बुद्धीः)

३—बुद्धीअ, बुद्धीआ, बुद्धीइ, बुद्धीहि, बुद्धीहिं, बुद्धीहिँ

बुद्धीए, (बुद्धया) (बुद्धिभिः)

४—बुद्धीअ, बुद्धीआ, बुद्धीइ बुद्धीण, बुद्धीणं

बुद्धीए, (बुद्ध्यै, बुद्धये) (बुद्धिभ्यः)

५—बुद्धीअ, बुद्धीआ, बुद्धीइ बुद्धित्तो, बुद्धितो

बुद्धीए, (बुद्धयाः, बुद्धेः) (बुद्धितः)

| | |
|---|---|
| बुद्धित्तो बुद्धितो बुद्धीओ | बुद्धीओ बुद्धिउ |
| बुद्धीउ, बुद्धीहिंतो | बुद्धिहिंतो. बुद्धिसुंतो |
| ( बुद्धितः ) | ( बुद्धिभ्यः ) |
| ६ - बुद्धीअ-बुद्धीआ-बुंद्धीइ | बुद्धीण, बुद्धीणं |
| बुद्धीए ( बुद्धयाः बुद्धेः ) | ( बुद्धीनाम् ) |
| ७—बुद्धीअ, बुद्धीआ, बुद्धीइ, | बुद्धीसु, बुद्धीसुं |
| बुद्धीए ( बुद्धयाम् बुद्धौ ) | ( बुद्धिषु ) |
| सं—बुद्धि, बुद्धी, (बुद्धे ) | बुद्धीउ, बुद्धीओ, बुद्धी |
| | ( बुद्धयः ) |

## उकारान्त धेणु-धेनु शब्द, के रूप

| | |
|---|---|
| १—धेणू ( धेनुः ) | धेणुउ, धेणुओ, धेणू, ( धेनवः ) |
| २—धेणु ( धेनुम् ) | ,, ,, ,, ( धेनूः ) |
| ३—धेणूअ, धेणूआ, धेणूइ, | धेणूहि, धेणूहिं धेणूहिँ |
| धेणूए ( धेन्वा ) | ( धेनूभिः ) |
| ४ धेणूअ, धेणूआ धेणूइ | धेणूण, धेणूणं |
| धेणूए ( धेन्वै, धेनवे) | ( धेनूभ्यः ) |
| ५—धेणूअ, धेणूआ, धेणूइ, धेणूए | धेणुत्तो, धेणूतो धेणूओ |
| धेणुत्तो, धेणूतो, धेणूओ, | धेणूहिंतो धेणूसुंतो |
| ( धेनोः धेन्वाः ) | ( धेनुभ्यः ) |
| धेणूउ धेणूहिंतो ( धेनुतः ) | |

| | |
|---|---|
| ६– धेणूअ, धेणूआ, धेणूई धेणूए (धेन्वाः, धेनोः) | धेणूण धेणूणं (धेनूनाम्) |
| ७– धेणूअ, धेणूआ धेणूइ धेणूए (धेन्वाम्, धेनौ) | धेणूसु धेणूसुं (धेनुषु) |
| स०–धेणु, धेणू (धेनो) | धेणूउ धेणूओ धेणू (धेनवः) |

ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग नई-नदी, शब्द के रूप—

| | |
|---|---|
| १—नई, नदी (नदी) | नदीआ नदीउ नदीओ नदी नईआ नईउ नईओ नई (नद्यः) |
| २-नदीं नईं (नदीम्) | नदीआ, नदीउ नदीओ नदी नईआ नईओ नईउ (नदीः) |
| ३—नदीअ, नदीआ नदीइ नदीए नईअ नईआ नईइ नईए (नद्या) | नदीहि, नदीहिं, नदीहिँ नईहि नईहिं, नईहिँ (नदीभिः) |
| ४—नदीअ नदीआ नदीइ नईअ नईआ नईइ नईए नदीए (नद्यै) | नदीण, नदीणं, (नदीभ्यः) |
| ५—नदीअ नदीआ नदीइ नदित्तो नदीतो नदीओ नदीउ नदीए नदीहिन्तो (नद्याः) | नदित्तो नदीतो नदीओ नदीउ नईतो नइत्तो नईओ नईउ नदीहिन्तो नदीसुंतो नईहिन्तो, नईसुंतो (नदीभ्यः) |
| ६—नदीअ, नदीआ नदीइ नदीए (नद्याः) | नदीण नदीणं (नदीनाम्) |

## ऋकारान्त पुँल्लिङ्ग भर्तृ शब्द के रूप

| | |
|---|---|
| १—भत्तारो ( भर्ता ) | भत्तुणो भत्तारा |
| २—भत्तारं | ,, भत्तारे |
| ३—भत्तुणा भत्तारेण | भत्तारेहिं भत्तुहिं |
| ४—भत्तुणो भत्तारस्स | भत्तुणं भत्ताराणं |
| ५—भत्ताराओ भत्तुणो | भत्तारेहिंतो |
| इत्यादि | |
| ६—भत्तुणो भत्तारस्स | भत्तुणं भत्ताराणं |
| भत्तारे, भत्तारम्मि,भत्तुम्मि | भत्तुसु भत्तारेसु |
| सं—हे भत्तार ! | हे भत्तारा ! |

पितृ—भ्रातृ—जामातृ शब्दों में इतनी विशेषता है:—

| | |
|---|---|
| १—पिया पिअरो ( पिता ) | पियरा पिउणो पिअवो, पिअओ,पिअउ,पिऊ (पितरः |
| २—पियरं ( पितरं ) | पियरे, पियरा, पिउणो,पिऊ (पितॄन् |
| ३—पियरेण पिउणा (पित्रा | पियरेहिं, पियरेहि । पिऊहिं ( पितृभिः ) |
| ४—पियरस्स पिउणो ( पितुः ) | पियराणं पिऊणं ( पितृभ्यः |

| | |
|---|---|
| ५—पिअराओ पियरत्तो पिउणो इत्यादि | पियराहिंतो पिऊहिंतो पियरेहिंतो पियरासुंतो ( पितुः ) |
| ६—पियरस्स, पिउणो ( पितुः ) | पियराणं पिऊणं ( पितृणाम्) |
| ७—पियरे पियरम्मि पिउम्मि ( पितरि ) | पियरेसु पिऊसुं ( पितृषु ) |
| सं—हे पिय हे पिअर (पितः) | हे पिअरा ! ( पितरः ) |

इसी प्रकार भ्रातृ और जामातृ शब्द के रूप होते हैं।

## मातृ [ स्त्री लिङ्ग ] शब्द के रूप

| | |
|---|---|
| १—माआ | माआ |
| २—माअं | माए |
| ३—माआइ माआअ इत्यादि | माएहि, माएहिं |
| ५—माआदो माआए इत्यादि | माआहिंतो माआसुंतो |
| ६—माआइ माआअ | मायाण मायाणं |
| ७— „ „ इत्यादि | माआसु माआसुं |
| सं—हे माअ ! | हे माआ ! |

| एकवचत | बहुवचन |
|---|---|
| २—ममं, मिमं, मं, अम्ह, म्मि अम्मि [ मां-मुझे ] | अम्हे अम्हणो [ अस्मान्-हमें ] |
| ३- मइ, मए, मि, मे, ममए ममाइ [ मया-मुझसे ] | अम्हेहिं अम्हाहिं अम्ह, अम्हे [ अस्माभिः-हमसे ] |
| ४—मम, ममं, मे, मज्झ [ मह्यम्- मुझे ] | अम्हे, अम्ह, मो, अह्माणं [ अस्मभ्यम्-हमें ] |
| ५—ममाहिंतो, ममत्तो, ममाओ ममाउ ममाहि [मत्-मुझसे] | अम्हहिंतो, अम्हेहिंतो ममहिंतो, अह्मत्तो, अम्हाओ [अस्मत्-हमसे ] |
| ६—मम ममं ( मम-मेरा ) | अम्हं, मो (अस्माकं-हमारा) |
| ७- ममंसि, ममंमि, महंसि, महम्मि ( मयि-मुझमें ) | अम्हेसु, ममेसु [ अस्मासु-हममें ] |

## युष्मद् [ मध्यम पुरुष ] शब्द के रूप

| एकवचन | बहुवचन |
|---|---|
| १—तुं, तुमं, तं ( त्वं-तू ) | तुब्भे ( यूयं-तुम ) |
| २- तुं, तुमे, तुए, तुमं, ( त्वां-तुझे ) | तुब्भे, वो, तुज्झ, तुम्ह, तुम्हे, (युष्मान् तुम्हें ) |
| ३ - ते, तुमे, तुमए तुमइ, ( त्वया-तुझ से) | तुब्भेहिं तुम्हेहिं (युष्माभिः-तुमसे ) |
| ४—तुव, ते, तुमं, तुह, | तुब्भं तुम्हं तुज्झाण, तुम्हाणं |

| | |
|---|---|
| तुज्झ [ तुभ्यं-तुझे ] | [युष्मभ्यम्-तुम्हें ] |
| ५—तुम्हाहिंतो, तुवत्तो, तुवाओ [त्वत् तुझसे] | तुब्भेहिंतो, तुम्हेहिंतो [ युष्मत्-तुमसे ] |
| ६—तव, ते, तुमं [ तव-तेरा] | तुब्भं तुम्हं [ युष्माकम् तुम्हारा ] |
| ७—तुमंसि, तुमम्मि, तुमे ( त्वयि-तुझमें ) | तुब्भेसु, तुम्हेसु, तुमसु (युष्मासु-तुममें ) |

युष्मद् और अस्मद् का सम्बोधन नहीं होता। यह तीनों लिङ्गों में एक जैसे रहते हैं॥

तद् (अन्य प्रथम पुरुष) शब्द के रूप

| | ए.व. | बहुव. | | ए.व. | ब.व. | | ए.व. | ब.व. | | ए.व. | ब.व. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | से | ते | २ | तं | ते | ३ | तेण्णं | तेहिं | ४ | तस्स | तेसिं |
| ५ | ताओ, तम्हा, | तेहिंतो | ६ | तस्स | तेसिं | ७ | तंसि | तंमि तेसु | | | |

| स्त्रीलिङ्ग— | | नपुंसकलिङ्ग— | |
|---|---|---|---|
| एक वचन | बहुवचन | एक वचन | बहुवचन |
| १—सा | ताओ | तं | ताइं, ताणि |
| २—तं | ताओ | ,, | ,, ,, |
| ३—ताए | ताहिं | तेणं | तेहिं |
| ४—तीसे | तासिं | तस्स | तेसिं |
| ५—ताओ | ताहिंतो | ताओ, तम्हा | तेहिंतो |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ६—तीसे | तासिं | तस्स | तेसिं |
| ७—तीसे | तासु | तंसि, तम्मि | तेसु |

इसी प्रकार अन्य शब्दों की रूपावलि प्राकृत भाषा से जान लेनी चाहिए। यहां पर तो विद्यार्थियों के लिए आदर्श-मात्र कुछ शब्दों की रूपवालि दी गई है।

अब अर्थ सहित देव शब्द की रूपावली देकर इस बात का स्पष्टीकरण किया जाता है कि—प्रत्येक शब्द की प्रत्येक विभक्ति का अर्थ, उक्त प्रकार से ही कर लेना चाहिए।

| एक वचन | बहुवचन |
|---|---|
| १—देवे, देवो | देवा |
| [एक देव] | [बहुत से देव] |
| २—देवं | देवे देवा |
| ,, देव को | ,, देवों को |
| ३—देवेणं | देवेहिं |
| ,, देव के द्वारा | ,, देवों के द्वारा |
| ४—देवाए देवस्स | देवाणं |
| ,, देव के लिये | ,, देवों के लिये |
| ५—देवाओ, देवा | देवेहिंतो |
| ,, देव से | ,, देवों से |

| | |
|---|---|
| तुज्झ [ तुभ्यं-तुझे ] | [युष्मभ्यम्-तुम्हें ] |
| ५—तुम्हाहिंतो, तुवत्तो, तुवाओ [त्वत् तुझसे] | तुब्भेहिंतो, तुम्हेहिंतो [ युष्मत्-तुमसे ] |
| ६—तव, ते, तुमं [ तव-तेरा] | तुब्भं तुम्हं [ युष्माकम् तुम्हारा ] |
| ७—तुमंसि, तुमम्मि, तुमे ( त्वयि—तुझमें ) | तुब्भेसु, तुम्हेसु, तुमसु (युष्मासु-तुममें ) |

युष्मद् और अस्मद् का सम्बोधन नहीं होता। यह तीनों लिङ्गों में एक जैसे रहते हैं॥

तत् (अन्य प्रथम पुरुष) शब्द के रूप

| | ए.व. | बहुव. | | ए.व. | व.व. | | ए.व. | व.व. | | ए.व. | व.व. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | से | ते | २ | तं | ते | ३ | तेण्यं | तेहिं | ४ | तस्स | तेसिं |
| ५ | ताओ, तम्ह, तेहिंतो | | ६ | तस्स | तेसिं | ७ | तंसि तंमि | तेसु | | | |

| स्त्रीलिङ्ग— | | नपुंसकलिङ्ग— | |
|---|---|---|---|
| एक वचन | बहुवचन | एक वचन | बहुवचन |
| १—सा | ताओ | तं | ताइं, ताणि |
| २—तं | ताओ | ,, | ,, ,, |
| ३—ताए | ताहिं | तेणं | तेहिं |
| ४—तीसे | तासिं | तस्स | तेसिं |
| ५—ताओ | ताहिंतो | ताओ, तम्हा | तेहिंतो |

| | | | |
|---|---|---|---|
| ६—तीसे | तासिं | तस्स | तेसिं |
| ७—तीसे | तासु | तंसि, तम्मि | तेसु |

इसी प्रकार अन्य शब्दों की रूपावलि प्राकृत भाषा से जान लेनी चाहिए। यहां पर तो विद्यार्थियों के लिए आदर्श-मात्र कुछ शब्दों की रूपवाल दी गई है।

अब अर्थ सहित देव शब्द की रूपावली देकर इस बात का स्पष्टीकरण किया जाता है कि—प्रत्येक शब्द की प्रत्येक विभक्ति का अर्थ, उक्त प्रकार से ही कर लेना चाहिए।

| एक वचन | बहुवचन |
|---|---|
| १—देवे, देवो | देवा |
| [ एक देव ] | [ बहुत से देव ] |
| २—देवं | देवे देवा |
| ,, देव को | ,, देवों को |
| ३—देवेणं | देवेहिं |
| ,, देव के द्वारा | ,, देवों के द्वारा |
| ४—देवाए देवस्स | देवाणं |
| ,, देव के लिये | ,, देवों के लिये |
| ५—देवाओ, देवा | देवेहिंतो |
| ,, देव से | ,, देवों से |

| | |
|---|---|
| ६—देवस्स | देवाणं |
| ,, देव का | ,, देवों का |
| ७—देवे, देवंसि | देवेसु |
| ,, देव में | ,, देवों में |
| सं० हे देवा, देवो ! | हे देवा ! |
| हे देव ! | हे देवो ! |

इसी विधान के अनुसार प्रत्येक शब्द में प्रत्येक विभक्ति का अर्थ जानलेना चाहिये।



# दसवां पाठ

## शब्द संग्रह

| शब्द | अर्थ | शब्द | अर्थ |
|---|---|---|---|
| कुरंग | मृग | झस | मच्छ |
| पाठीण | मत्स्य | कच्छभ | कच्छू |
| सस | सैहा-ससला | सरभ | अटवीका पशु |
| चमरी | चमरी गाय | सँवर | बारह सिंगा |
| हुरब्भ | बकरा | ससय | शशक |
| गोण | वृषभ-बैल, | रोहिय | रोहित पशु |
| हय | घोड़ा | गय | हाथी |
| खर | गधा | करभ | ऊँट |
| खग्ग | गैण्डा | वानर | बँदर |
| गवय | रोझ | विग | वृक-व्याघ्र |
| सियाल | गीदड़ | मज्जार | बिल्ला-बिडाल |
| कोल्सुणक | महाशूकर | महिस | महिष-भैंसा |
| विग्घ | व्याघ्र | छगल | बकरा |
| साण | कुत्ता | सद्दूल सीह | शार्दूलसिंह |
| अयगर | अजगर | गोणस | बिना फणका साँप |

| | | | |
|---|---|---|---|
| मउली | नाका साँप | दव्वीकर | फण वाला साँप |
| णउल | नकुल-नेउला | कादम्बक | हंस विशेष |
| बलाका | बगुली | सारस | हंस |
| सउण | शकुन्त (पक्षी) | सूईमुह | सूचीमुख, तीखी चोंच वाला पक्षी |
| चक्कवाग | चकवा | गरुल | गरुड़ |
| सुय | शुक-तोता | मयण साला | मदनशाला ( मैना पक्षी ) |
| कवोतक, कवोय | कबूतर | मयूरग | मयूर-मोर |
| सेण | बाज | तित्तिर | तीतर |
| वायस | काग | चम्म | चर्म |
| मंस | माँस | नह | नख |
| सोणिय | रुधिर | दंत | दान्त |
| अट्ठी | हड्डी वा गुठली | सिंग | सींग |
| विसाण | दाढ़ | विसाण | हाथी के दान्त |
| कण्ण | कान | नयण | आंख |
| नक्क | नाक | वाल | केश |
| भमर | भ्रमर भौंरा | कूव | कूप |
| तलाय | तालाव | आराम | बाग |
| विहार | धर्मस्थान | थूभ | स्तूप |
| सेतु | पुल | पागार | प्राकार-कोट |

| | | | |
|---|---|---|---|
| पासाय | प्रासाद | लेंण, लयण | गुहा, गुफा |
| आवण | दुकान | चित्तसभा | चित्रसभा |
| भूमिघर | भोरा | आवसह | तपस्वियों का आश्रम |
| मंडव | मंडप, वेदी-वस्त्रादि निर्मित गृह | | |
| वत्थ वस्त्र | कम्म | कर्म | हत्थ हाथ |
| मज्जण | स्नान | सुप्प | सूप—छाज |
| वियण | पङ्खा | मुह | मुख |
| कर | हाथ | सगड़ | शकट—गाड़ा |
| चंद्सालिया | चन्द्रशालिका [चौबारा] | सभा-सहा | सभा |
| पवा | पानी पिलाने का स्थान | मुसंढि | बन्दूक |
| सतग्धि | तोप | चाव | चाप—धनुष |
| करि | हाथी | दारिय | बालक |
| खंडिय | विद्यार्थी | माहण | ब्राह्मण |
| खत्तिय | क्षत्रिय | वइस्स | वैश्य |
| सुद्द | शूद्र | विप्प | विप्र |
| दिअ | द्विज-ब्राह्मण | नाइ | ज्ञाति |
| नाग | साँप, वा हाथी | नाग कुमार | भवनपतिदेव |
| नागकुमारी | भपनपतिनागदेवी | नाग दंत | कीला |
| नाग वाण | नागवाण | नामक | अस्त्रविद्या |
| अगणिवाण | अग्निविद्या | आग्नेयअस्त्र | |

| | | | |
|---|---|---|---|
| नाग रुक्ख | नागवृक्ष | नागलया | पानकीवेल |
| नाड़ग, नाडय | नाटक | नाणंतराय | ज्ञानान्तराय |
| नाणायार | ज्ञानाचार | नाणावरण | ज्ञानावरण कर्म [अविद्या] |
| नाणि | ज्ञानी | नाभि | नाभि |
| नामकरण | नामकरणसंस्कार | नायपुत्त | ज्ञात पुत्र [महावीर स्वामी] |
| नारंग | नारङ्गी | नाराय | नाराच वाण |
| नारायण | वासुदेव | नारी | स्त्री |
| नाल | पतनाला, नाली [जलनिकलनेकामार्ग] | नालिया | समय सूचक यन्त्र-घड़ी |
| नाली | घड़ी | नावा | नौका |
| नाविअ | नाविक | नास | न्यास, धरोहर |
| नाहिय | नास्तिक | नाहिय वाय | नास्तिक वाद |
| नाहियवादि | नास्तिकवादी | नियम | नियम |
| नियमिय | नियमित | निक्कम्मदंसी | आत्मद्रष्टा |
| निक्कल | कलारहित | निगाम | अत्यन्त सीमारहित |
| निघस | कसौटी | निच्चल | निश्चल |
| निकरण | निश्चयकरना निर्णय करना | | |
| निच्छय | निश्चय | निजाय, निजाग | मोक्षमार्ग |

| | | | |
|---|---|---|---|
| निरामय | रोग रहित | निरागरण | निराकरण |
| नीलकंठ | नीलकण्ठ | नीलमिग | नीलमृग |
| नीलुप्पल | नीलोत्पल | नीहार | बड़ीनीति |
| नेतार | नेता | निवत्थ | वेष |
| निव्वाण | निर्वाण-मोक्ष | नेसग्गिय | नैसर्गिक-स्वाभाविक |
| नेह | स्नेह | नोमालिया | नव मालिका |
| मिच्छादिट्ठि | मिथ्यादृष्टि | न्हवण | स्नान |
| पइण्णा | प्रतिज्ञा | | |



# ग्यारहवां पाठ

| | |
|---|---|
| इमीए पाडसालाए किं नाम अत्थि ? | इस पाठशाला का क्या नाम है ? |
| जइण पाडसाला | जैन पाठशाला |
| एत्थ कति अज्झावया संति ? | यहां कितने अध्यापक हैं। |
| पणवीसा | पच्चीस |
| इमिया के नियमा संति ? | इस के क्या नियम हैं ? |
| भवंतो नियमावलिं पस्संतु | आप नियमावली को देखें |
| पढक्कमो केरिसो अत्थि ? | पाठ्यक्रम कैसा है ? |
| अइ सुंदरो अत्थि | अति सुन्दर है। |
| अज्झावया किं भणाविंति ? | अध्यापक लोग क्या पढ़ाते हैं |
| सक्कयं पागयं धम्मसत्थाइं तहा अण्णेवि विसए भणाविंति। | संस्कृत प्राकृत धर्म शास्त्र अन्य विषय भी पढ़ाते हैं। |
| किं नाय सत्थ विसएवि तेसिं गई अत्थि? | क्या न्याय शास्त्र विषय में भी उनकी गति है। |
| हंता ? नाए-वागरण साहिच्चाइ सव्व विसयेसु तेसिं विसिट्ठा गई अत्थि | हां ! न्याय व्याकरण साहित्यादि सर्व विषयों में उनकी विशेष गति है। |
| जया अइमुत्तस्स कुमारस्स। | जब अतिमुक्त कुमार को |

विरागो होत्था तया तेण
अम्मा पियराणं पुरओ किं
किं भासियं ?
कहेमि, भवंतो ज्झाणपुव्वं
सुणेह। ततेणं से अइमुत्ते
कुमारे जेणे व अम्मा पियरो
तेणे व उवागते जाव पव्व-
तित्तए
अइ मुत्तं कुमारं अम्मा पियरो
एवं वयासी
बाले सि ताव तुमं पुत्ता !
असंवुद्धे ऽसि ताव तुमं पुत्ता
किं नं तुमं जाणासि धम्मं
त तेणं से अइमुत्ते कुमारे
अम्मा पियरो एवं वयासी।
एवं खलु अम्म याता ! जं च
जाणामि तं चेव न जाणामि
जं चेव न जाणामि,
तं चेव जाणामि ।

वैराग्य हुआ था तब उसने
माता पिता के सामने क्या
कहा था ?
मैं कहता हूं आप ध्यानपूर्वक सुनो
तब वह अतिमुक्त कुमार
जहां पर माता पिता थे वहां
पर आया यावत्, उसने उनके
प्रति दीक्षा के लिये कहा।
अतिमुक्त कुमार के प्रति माता
पिता इस प्रकार कहने लगे।
हे पुत्र तू अभी बालक है
हे पुत्र तू अभी सम्बोधरहित है
तू धर्म को क्या जानता है।
तब वह अतिमुक्त कुमार
माता पिता के प्रति इस
प्रकार बोला।
हे माता पिता जी यह ठीक है
जिसको मैं जानता हूं उसको
मैं नहीं जानता हूं।
जिसको मैं नहीं जानता हूं,
उसको मैं जानता हूं।

| | |
|---|---|
| ततेणं तं अइमुत्तं कुमारं अम्मा पियरो एवं वयासी। | तब उस अतिमुक्त कुमार से माता पिता ने इस प्रकार कहा। |
| कहं नं तुमं पुत्ता जं चेव जाणासि तं चेव न जाणासि | हे पुत्र तू किस भान्ति, जिस को जानता है, उसको नहीं जानता और जिस |
| जं चेव न जाणासि तं चेव जाणासी?। | को नहीं जानता उस को जानता है?। |
| ततेणं से अइमुत्ते कुमारे अम्मा पियरो एवंवयासी। | तब वह अतिमुक्त कुमार माता पिता के प्रति इस प्रकार कहने लगा। |
| जाणामि अहं अम्मतातो जहा जाएणं अवस्स मरियव्वं। | हे माता पिता जी मैं जानता हूं जिस का जन्म हुआ है उसकी मृत्यु अवश्यं भावी है। |
| न जाणामि अहं अम्म ताता! काहे वा कहिं वा केच्चिरेण वा। | मैं नहीं जानता हूं, हे माता पिता जी किस समय किस प्रकार से कितने समय व्यतीत होने पर। |
| न जाणामि अम्म याता! केहिं कम्मादणेहिं जीवा नेर- | हे माता पिता जी मैं नहीं जानता हूं किन कर्मों के |

| | |
|---|---|
| इय,-तिरिक्ख-जोणि-मणु-स्स-देवेसु उववज्जंति । | ग्रहण से जीव नैरयिक-तिर्यक् योनि-मानुष और देवों में उत्पन्न होते हैं, अर्थात् उक्त योनियों के कारण भूतकर्म कौन २ से हैं। |
| जाणामि अम्म यातो ! जहा सतेहिं कम्मायाणेहिं जीवा-नेरइय जाव उववज्जंति । | माता पिता जी ! मैं जानता हूं यथा स्व स्व कर्मों के ग्रहण से जीव (उक्त चारों गातियों में) उत्पन्न होते हैं। |
| एवं खु अहं अम्म तातो ! जं चेव जाणामि तं चेव न जाणामि | इस प्रकार हे माता पिताजी ! जिस को मैं जानता हूं उस को मैं नहीं जानता । |
| जं चेव न जाणामि तं चेव जाणामि । | और जिस को मैं नहीं जानता हूं उस को मैं जानता हूं। |
| इमं पड़िवयणं विरागस्स कारण मत्थि । | यही उत्तर वैराग्य का कारण है। |
| इसीणं वयणं पमाणं भवति । | ऋषियों का वचन, प्रमाण होता है। |
| महप्पसाया इसिणो भवन्ति । | ऋषि बड़े कृपालु होते हैं। |
| नहु मुणी कोहवरा हवन्ति । | मुनि क्रोधी नहीं होते हैं। |
| ◌णिणो संसारि जीवाणं तहा | ◌नियों का संसारि जीवों को |

पणपण्णासा, पंचावरणा । छप्पण्णा–छप्पराणासा । सत्ता वराणा–सत्तपराणासा । अड़वन्ना-अट्ठपराणासा, अट्ठावराणा। एगूण सट्ठि । सट्ठि । एगसट्ठि–इगसट्ठि । बासट्ठि । तेसट्ठि । चउसट्ठि–चोसट्ठि । पणसट्ठि । छासट्ठि । सत्तसट्ठि । अट्ठ सट्ठि, अड़सट्ठि । एगूणसत्तरि । सत्तरि–हत्तरि । एगसत्तरि–एगहत्तरि इक्कसत्तरि–इक्कहत्तरि । विसत्तरि वासत्तरि·बिहत्तरि वाहत्तरि बावत्तरि । तिसत्तरि–तिहत्तरि ।चोसत्तरि–चोहत्तरि-चउसत्तरि चउहत्तारि ।पणसत्तरि-पणहत्तरि । छसत्तरि-छहत्तरि । सत्त सत्तरि–सत्तहत्तरि । अट्टसत्तरि–अट्ठहत्तरि । एगूणसीइ । असीइ, एगासीइ । बासीइ, तेसिइ । चउरासीइ-चोरासीइ । पंचासीइ । छासीइ । सत्तासीइ । अट्ठासीइ । नवासीइ-एगूण-नवइ । नवइ । एगणवइ-इगणवइ,एगाणवइ । बाणवइ । तेणवइ । चउण·वइ, चोणवइ । पंचणवइ, पंचाणवइ । छराणवइ । सत्तण-वइ । अट्ठणवइ-अट्ठाणवइ अड़णवइ । नवणवइ-णवणवइ, एगूण-सय । सय । दुसय, विसय, बेसयाइ । तिसय, तिण्णिसयाइ । चत्तारि सयाइ । सहस्स । दससहस्स दह सहस्स, अयुत अयुअ । लक्ख । दसलक्ख दहलक्ख पयुत·पयुअ । कोड़ि, कोडा-कोडी । इत्यादि संख्या वाचक शब्द प्राकृत में होते हैं ।

## अधिकतर व्यवहार में आने वाले
## कतिपय शब्दों का संग्रह

घड–घट घर–गृह हरड–हरीतकी चंद–चन्द्र

रुक्ख-वृक्ष सही-साक्षी मुह-मुख मेह-मेघ आगयो-आगतः सप्प-सर्प अवच्च—अपत्य हत्थ—हस्त, नक्क-नाक, जिब्भा-जिह्वा, दांत, ओट कन्न-कर्ण, दुक्ख-दुःख, कम्म-कर्म्म, चम्म-चर्म्म दुद्ध-दुग्ध, थण-स्तन, अम्बफल-आम्रफल, तम्ब-ताम्र,



# तेरहवाँ पाठ

## धातुओं के रूप

जिस प्रकार पूर्व पाठों में प्राकृत भाषा के प्रयोग वा कुछ शब्दों की रूपावलि दिखलाई गई है, ठीक उसी प्रकार इस पाठ में आदर्शमात्र क्रिया के विषय में लिखा जाता है, और तीनों पुरुषों में जो रूप बनते हैं वे दिखाए जाते हैं, प्राकृत के प्रयोगों में प्रायः भूत वर्तमान और भविष्यत् तथा आज्ञा विधि के लकारों के रूप देखे जाते हैं, अतएव उक्त चारों लकारों के ही रूप यहां पर दिए गये हैं।

### वर्त्तमान काल ( कर्तृवाच्य )

पास—देखना

| | एकवचन | बहुवचन |
|---|---|---|
| प्र. पु. | पासइ—वह देखता है | पासंति—वे देखते हैं, |
| म. पु. | पाससि—तू देखता है | पासह—तुम देखते हो, |
| उ. पु. | पासामि—मैं देखता हूं, | पासामो—हम देखते हैं, |

कृ—"कर" करना

| | | |
|---|---|---|
| प्र. पु. | करेइ—वह करता है, | करेंति—वे करते हैं, |
| म. पु. | करेसि—तू करता है, | करेह—तुम करते हो, |

उ. पु. करेमि—मैं करता हूं। करेमो–हम करते हैं,

कुछ ऐसे धातु भी हैं जिनके रूप निपात सिद्ध होते हैं, उनमें से "अस" धातु का प्रयोग अधिक होता है, इसलिये उसके रूप नीचे लिखे जाते हैं,

| | एकवचन | बहुवचन |
|---|---|---|
| प्र. पु | अत्थि–वह है | संति—वे हैं |
| म. ,, | असि, सि–तू है | त्थ—तुम हो |
| उ. ,, | अंसि, मि - मैं हूं | मो—हम हैं |

भूतकाल प्र: म. उ. पुरुष

एकवचन-पासित्था—उसने तूने या मैंने देखा,
बहुवचन-पासिंसु –उन्होंने, तुमने या हमने देखा
एकवचन-करेत्था—उसने तूने या मैंने किया,
बहुवचन-करेंसु,करिंसु –उन्होंने तुमने या हमने किया,

भविष्यत् काल

| | एकवचन | बहुवचन |
|---|---|---|
| प्र. पु | पासिस्सइ—वह देखेगा | पासिस्संति—वे देखेंगे |
| म. पु. | पासिस्ससि –तू देखेगा | पासिस्सह तुम देखोगे |
| उ. पु. | पासिस्सामि –मैं देखूंगा | पासिस्सामो –हम देखेंगे |

इसी प्रकार "कर" धातु के भी रूप बनते हैं।

अन्य प्रकार से भी भविष्यत् काल के रूप बनते हैं, जैसे—

| | | |
|---|---|---|
| प्र. पु. | पासिहिइ—वह देखेगा | पासिहिंति—वे देखेंगे |
| म. पु. | पासिहिसि—तू देखेगा | पासिहिह—तुम देखोगे |
| उ. पु. | पासिहिम—मैं देखूंगा | पासिहिमो—हम देखेंगे |

इस अवस्था में "कर" को "का" होजाता है, जैसे –
"काहिइ,,—वह करेगा "काहिसि" तूं करेगा॥

प्रथम पुरुष के एक वचन के रूपों में, हि और इ, इन दोनों के स्थान में "ही" भी होजाता है जैसे—"काहिइ" के स्थान में "काही" बन गया है, "कर" धातु का निपात सिद्ध रूप, जैसे—करिस्सं=करिष्यामि (मैं करूंगा) होता है। इसी प्रकार "वय" (बोलना) धातु का निपात सिद्ध रूप है-वोच्छं-(वक्ष्यामि मैं बोलूंगा॥

## आज्ञाकारी क्रिया [ कर्तृवाच्य ]

### पास—देखना

| | एकवचन | बहुवचन |
|---|---|---|
| प्र. पु. | पासउ वह देखे। | पासंतु—वे देखें। |
| म. ,, | पास, पासाहि—तू देख। | पासह - तुम देखो। |
| उ. ,, | पासामु मैं देखूं। | पासामो—हम देखें। |

### कर—करना

| | | |
|---|---|---|
| प्र. पु. | करेउ—वह करे। | करेंतु—वे करें। |
| म. ,, | करेहि—तूं कर। | करेह—तुम करो। |
| उ. ,, | करेमु—मैं करूं। | करेमो—हम करें। |

मध्यम पुरुष एकवचन में "हि" के स्थान में "सु" भी हो जाता है यथा—"कहसु" (कथय) तू कह ?

पास—धातु के कुछ अन्य रूप

| | एकवचन | बहुवचन |
|---|---|---|
| प्र.— | पासेज्जा, पासिज्जा=वह देखे | पासेज्जा, पासिज्जा—वे देखें |
| म.— | पासेज्जा, पासिज्जा=तू देख | पासेज्जासि, पासिज्जासि= तुम देखो ? |
| उ.— | पासिज्जा, पासेज्जा=मैं देखूँ | पासेज्जा, पासिज्जा=हम देखें |

## प्रेरणार्थक क्रिया के रूपों का दिग्दर्शन

करेइ=वह करता है, इसकी प्रेरणार्थक क्रिया है, करावेइ=वह करवाता है, कप्पइ=वह काटता है, कप्पावेइ=वह कटवाता है, इत्यादि प्रेरणार्थक क्रियाओं के रूप भी जान लेने चाहिएँ ॥

## वाक्य संग्रह

अहं गामे गच्छामि, धम्मोवएसं करिस्सामि। समणस्स नायपुत्तस्स पवयणं सीसे भणावेमि, समणेण भगवया महावीरेण अहिंसा धम्मो जगम्मि पयासिओ। कुमारपालो भूवई परम धम्मिओ आसी। पुज्ज अमर सिंघो पंचाल ठाणगवासी जइण संघस्स पसिद्धो आयारओ होत्था। हिंसा भगवया निसेहिया, पडिसेहिया। दाणीं अम्हेहिं अरिहंत भगवओ सिद्धंतस्स सव्वत्थ पयारो करियव्वो। सव्वेसु धम्मसत्थेसु अहिंसा भगवीए महिमा गीया,

पायय भासाए पत्त लेहण विही—

[प्राकृत भाषा में पत्र लिखने की विधि ]

सीसं पइ गुरुणो पत्तं—

पिय ! आउसं ! पवित्त चरित्त, चिरंजीवी भव !

तुम्हाणं भत्तियुत्तं पेम पत्तं आगयं तं पढिऊण सव्व समायारे नच्चा हं परम पसन्नो जाओ, तव परिस्समं दट्ठुं हं कहेमि? भवं अवस्स मेव सय कक्खाए समुत्तिण्णो भविस्सइ तहावि भवं अब्भासे पमायं मा करेज्जा सज्झायओ विज्जा सफला भवइ, सय कुसल समायारो दायव्वो

तव सुहाकंक्खी

जिणेसरदासा— अज्झावयो

गुरुं पइ सीसस्स पत्तं—[गुरुकेप्रति शिष्यका पत्र]

सिरिमंतेसु, पुज्जवरेसु, विज्जावुड्ढेसु, सव्व गुण संपन्नेसु ! मुहो मुहो नमोक्कारं करेमि, भंते ! भवयाणं किवापत्तमागयं तं वायइत्ता मे हियए परमाणंदो संजाओ, भवयाणं किवाओ हं सय कक्खाए पढमंके समुत्तिण्णोम्हि, भे आसीस वायाउ मे विज्जा सफली भविस्सइ इअ हं आसासे, ओआस वासरेसु भवयाणं चलण कमलाणं संफासं अवस्स मेव करिस्सामि, सय कक्खाए सव्वं उदंतं भवयाणं सम्मुहे उवागम्म निवेदिस्सामि, दंसणेण च संतत्त हिययं संतं

करिस्सामि, भवयाणं उवयारो कयाइवि न विसरिस्सामि

सिरिमन्ताणं किवाकंक्खी।

देवेन्द कुमारो

मित्तंपइ मित्तस्स पत्तं—

[मित्र के प्रति मित्र का पत्र]

पिय, सव्वगुणलंकआ ! विणयाइ गुण संपन्ना ! नमोत्थु। भवयाणं पेमपत्तं वायइत्ता हं परम प्पसन्नो जाओ। एत्थ कुसल मत्थि, तुम्ह केरं कुसलं इच्छामि, नवरं, पत्तस्स उदंतं नाऊण विम्हियोमि। वयस्स ! सयायारो न कयावि जहिअव्वो वयं एगी भूय धम्मस्स पयारं करेज्जा जओ जणा धम्मस्स अभिलासं कुव्वंति। एसा ममइच्छा वट्टइ। किं भवओ वि रोयए ? पिय ! मम एसोवि वियारो अत्थि—"वयं मिलिइत्ता पायय पाठसालाए जिण सत्थाणं अज्झयणं करेमो। दाणीं मे निवासो एत्थ न भविस्सइ, सिरीमंतस्स पत्तं पेच्छ अहं सय कज्जस्स णिच्छयं करिस्सामि पत्तं खिप्पं पेसाणिज्जं ?

तुम्हकेरो—सुहिय—धनपालो

※ इइ समत्ता पायय बालमनोरमा ※

# गुरुपसत्थी

नाय सुओ वद्धमाणो, नाय सुओ महामुणी।
लोगे तित्थयरो आसी, अपच्छिमो सिवंकरो ॥
सतित्थेठविओ तेण, पढमो अणुसासगो।
सुहम्मो गण हरो नाम, तेअंसी सम णिच्चओ ॥
तत्तोपवट्टिओ गच्छो, सोहम्मो नाम विस्सुओ।
परंपराए तत्थासी, सूरी चामर सिंघओ ॥
तस्स संतस्स दंतस्स, मोतीरामाभिहोमुणी।
होत्थ सीसो महापन्नो, गणिपय विभूसिओ ॥
तस्स पट्टे महाथेरो, गणावच्छेअगो गुणी।
गणपति सन्निओ साहू, सामण्ण गुण सोहिओ ॥
तस्स सीसो गुरु भत्तो, सो जयरामदासओ।
गणावच्छेयगो अत्थि, समो मुत्तोव्व सासये ॥
तस्स सीसो सच्च संघो, पवट्टग पयंकियो।
सालिग्गामो महा भिक्खू, पावयणी धुरंधरो ॥
तस्संते वासिणा एसा, अप्पारामेण भिक्खुणा।
उवज्झाय पयंकेणं, बालाणं सुह हेयवे ॥
निम्मिया लहु भूयेयं, पागय बाल मनोरमा ॥
आग्गि गह अंक चंदेसु, विक्कमद्देसु पूरियां।
रावलपिंडी नयरे, सावग संघ समाउले ॥